संस्कृति-रक्षक संघ साहित्य रत्नमाला का ४ था रत्न

अंतगडदसा सूत्र

अनुवादक--

पं. श्री घेवरचंदजी बाँठिया (वर्तमान मुनि श्रीवीरपुत्रजी म.) न्यायतीर्थ, व्याकरणतीर्थ, सिद्धांत-शास्त्री

प्रकाशक--

अखिल भारतीय साधुमार्गी
जैन संस्कृति-रक्षक संघ
सैलाना (म. प्र.)

प्राप्ति-स्थान

१ श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन संस्कृति-रक्षक संघ
सैलाना ४५७-५५० (मध्य-प्रदेश)

२ शाखा " एदुन बिल्डिग, पहली धोबी-तलाव लेन
बंबई—४०००२

३ " सिटी पुलिस, जोधपुर (राजस्थान)

४ श्री भंवरलालजी बांठिया
नं. ९ पुलियनथोप, हाइरोड, मद्रास—१२

५ श्री हस्तीमलजी किशनलालजी जैन
बालाजीपेठ, जलगांव—१

मूल्य ५–००

नौवीं आवृत्ति
३०००

वीर संवत् २५१६
विक्रम संवत् २०४६
मार्च सन् १९९०

मुद्रक—श्री जैन प्रिंटिंग प्रेस, सैलाना (म. प्र.)

अस्वाध्याय

निम्न लिखित चौतीस अस्वाध्याय के कारणो को टाल कर स्वाध्याय करना चाहिये ।

आकाश सम्बन्धी १० अस्वाध्याय

कारण	काल मर्यादा
१ बडा तारा टूटे तो—	एक पहर
२ किसी दिशा में नगर जले जैसी लपटे उठने का दृश्य दिखाई दे तो	जब तक रहे
३ अकाल मे मेघ गर्जन हो तो—	दो पहर
४ अकाल मे बिजली चमके तो—	एक पहर
५ अकाल में बिजली कड़के तो—	दो पहर
६ शुक्ल पक्ष (सुदी) की एकम, बीज तीज की रात को—	एक पहर रात्रि तक
७ आकाश में यक्ष का चिह्न दिखाई दें तो—	जब तक दिखाई दे
८ काले रंग की धूंअर—	जब तक रहे
९ सफेद रंग की धूंअर—	जब तक रहे
१० आकाश मण्डल धूलि से आच्छादित हो तो—	जब तक रहे

औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय

११–१३ तिर्यंच पंचेन्द्रिय की हड्डी, रक्त (खून) और मांस साठ हाथ के भीतर हो तो तथा मनुष्य की हड्डी, रक्त और मांस सौ हाथ के भीतर हो तो—

(मनुष्य की हड्डी यदि जली और धुली न हो तो १२ वर्ष तक अस्वाध्याय रहता है)

१४ अशुचि की गंध आवे या अशुचि दिखाई दे तो— तब तक
१५ श्मशान भूमि सौ हाथ से कम दूर हो तो— जब तक
१६ चन्द्रग्रहण खण्ड ग्रहण मे— आठ पहर
चन्द्र ग्रहण पूर्ण ग्रहण में— बारह पहर
१७ सूर्य ग्रहण (खण्ड ग्रहण) मे— बारह पहर
सूर्य ग्रहण (पूर्ण ग्रहण) में— सोलह पहर
१८ राजा की मृत्यु हो जाने पर—जब तक नया राजा घोषित न हो
१९ युद्ध स्थल के निकट— जब तक युद्ध चले
२० उपाश्रय मे पंचेन्द्रिय जीव का शव (मरा हुआ शरीर) पड़ा हो— जब तक पड़ा रहे
२१ से २५ तक—आषाढ़, भादवा, आसोज, कार्तिक और चैत्र (चेत) की पूर्णिमा— पूरा दिन रात
२६ से ३० तक—इन्ही पूर्णिमाओं के बाद की प्रतिपदा (एकम) अर्थात् श्रावण, आसोज, कार्तिक, मिगसर और वैशाख इन पाच महीने की वदी एकम— पूरा दिन रात
३१ से ३४ तक—प्रातः काल, मध्याह्न (दोपहर) शाम और आधी-रात, इन चार संधिकालो मे— एक मुहूर्त

उपरोक्त अस्वाध्याय के कारणो को टाल कर स्वाध्याय करना चाहिए। खुले मुह नही बोलना तथा नही पढ़ना चाहिए। दीपक के उजाले मे भी नही वाचना चाहिए। ये अस्वाध्याय मूल सूत्र की मानी गई है।

नोट—आर्द्रा नक्षत्र से लेकर स्वाति नक्षत्र लगने तक ये वर्षा के नक्षत्र माने गये है। इसलिए इनमे मेघ गर्जना, बिजली चमकना को अस्वाध्याय नहीं मानी गई है।

॥ नमो सिद्धाणं ॥

श्री अंतकृतदसांग सूत्र
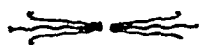
तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था, वण्णओ। तत्थ णं चंपाए णयरीए उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए एत्थ णं पुण्णभद्दे णामं चेइए होत्था, वणसंडे वण्णओ। तीसे णं चंपाए णयरीए कोणिए णामं राया होत्था, महया हिमवंत, वण्णओ ॥१॥

भावार्थ--इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के समय में चम्पा नामक नगरी थी। उस चम्पा नगरी का विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र में दिया गया है, अतः वहाँ से जानना चाहिए। चम्पा नगरी के उत्तर-पूर्व दिशा-भाग (ईशान-कोण में) पूर्णभद्र नाम का चैत्य (यक्षायतन) था। वहाँ एक अति रमणीय सुन्दर वनखण्ड* था। उसका भी विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र से जानना चाहिये।

उस चम्पा नगरी में कोणिक नाम का राजा राज करता था। वह महा हिमवान् महा मलय, महेन्द्र और मेरु पर्वत के

* जहाँ एक ही जाति के वृक्ष प्रधान हो, उसे 'वनखण्ड' कहते है। कोई-कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि—जहाँ अनेक जाति के प्रधान वृक्ष हो, उसे 'वनखण्ड' कहते है।

समान प्रभावशाली था अर्थात् जिस प्रकार महा हिमवान् पर्वत, लोक की मर्यादा करता है, उसी प्रकार वह भी प्रजा के लिये मर्यादा—नियम बांधने वाला था। जिस प्रकार महामलय पर्वत का सुगन्धित पवन सर्वत्र फैलता है, उसी प्रकार उसकी कीर्ति और यश चारों ओर फैला हुआ था। जिस प्रकार मेरु पर्वत अडिग है, उसी प्रकार वह भी अपनी प्रतिज्ञा एवं कर्त्तव्य पालन में दृढ एवं अडिग था। जिस प्रकार शक्र आदि इन्द्र, देवों में महान् है, उसी प्रकार वह भी मनुष्यों मे प्रधान था। उस कोणिक राजा का विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र से जानना चाहिए ॥ १ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्ज-सुहम्मे थेरे जाव पंचहिं अणगार-सएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव चंपा णयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव समोसरिए। परिसा णिग्गया जाव पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्ज सुहम्मस्स अंतेवासी अज्ज जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते। अट्ठमस्स णं भंते ! अंगस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? । २ ।

अर्थ--उस काल उस समय में स्थविर* आर्य सुधर्मा-स्वामी पाँच सौ अनगारों के साथ तीर्थंकर भगवान् की परम्परा के अनुसार विचरते हुए एवं अनुक्रम से ग्रामानुग्राम विहार करते हुए चम्पा नगरी के पूर्णभद्र नामक उद्यान में पधारे।

आर्य सुधर्मा स्वामी के आगमन को सुनकर परिषद् उन्हें वन्दना करने के लिये एवं धर्म-कथा सुनने के लिये अपने-अपने घर से निकल कर वहाँ पहुँची और वन्दन कर एवं धर्म कथा सुनकर लौट गई।

उस काल, उस समय में आर्य सुधर्मा स्वामी की सेवा में

---

* प्रश्न--स्थविर किसे कहते है ?

उत्तर--तप संयम मे लगे हुए साधुओ को परीषह-उपसर्ग आने पर यदि वे संयम-मार्ग से गिरते हो, शिथिल बनते हो, तो उन्हें जो, संयम मे स्थिर करे, उन मुनि को 'स्थविर' कहते है। वे वयः, श्रुत और दीक्षा मे बड़े होते है। इस अपेक्षा से स्थविर के ३ भेद है-१ वयःस्थविर २ श्रुतस्थविर और ३ दीक्षा स्थविर।

१ वय स्थविर--जिन मुनि की वयः साठ वर्ष की हो, वे वयः-स्थविर कहलाते है। इन्हे अवस्था-स्थविर भी कहते हैं।

२ श्रुत-स्थविर--जो ठाणाग सूत्र और समवायाग सूत्र के ज्ञाता हों, उन्हे श्रुत-स्थविर कहते है। उन्हे ज्ञान-स्थविर भी कहते है।

३ दीक्षा-स्थविर--जिनकी दीक्षा पर्याय २० वर्ष की हो--उन्हें दीक्षा स्थविर कहते हैं। उन्हें प्रव्रज्या-स्थविर या पर्याय-स्थविर भी कहते है।

सदा समीप रहने वाले, काश्यप-गोत्रीय आर्य जम्बू स्वामी ने आर्य सुधर्मा स्वामी से इस प्रकार पूछा–हे भगवन् ! (अपने शासन की अपेक्षा से) धर्म की आदि करने वाले, साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चार तीर्थ की स्थापना करने वाले यावत् सिद्ध-गति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने "उपासकदशा" नामक ७ वें अंग में आनन्द कामदेव आदि दस उपासकों का वर्णन किया है। वह मैंने आपके मुखारविद से सुना है। अब कृपा कर यह बताइये कि 'अतकृतदसा'+ नामक ८ वें अग में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने किस विषय का प्रतिपादन किया है ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता। जइ णं भंते !

+ प्रश्न—अन्तकृत (अन्तगड) दसा किसे कहते है ?

उत्तर—अन्तकृतदसा शब्द का अर्थ टीकाकार श्री अभयदेव सूरी ने इस प्रकार किया है—

"अन्तो–भवान्तः, कृतो–विहितो यैस्तेऽन्तकृतास्तद् वक्तव्यता प्रतिबद्धा दशाः। दशाध्ययनरूपा ग्रन्थपद्धतय इति अन्तकृतदशाः"।

अर्थ—जिन महापुरुषो ने भव का अन्त कर दिया है, वे 'अन्तकृत' कहलाते है। उन महापुरुषो का वर्णन जिन दसा अर्थात् अध्ययनो मे किया हो, उन अध्ययंनो से युक्त शास्त्र को 'अंतकृतदसा' कहते है। इस सूत्र के प्रथम और अन्तिम वर्ग के दस-दस अध्ययन होने से इसको 'दसा' कहा है।

समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठवग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगड-दसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तंजहा---

गाहा--गोयम समुद्द सागर, गंभीरे चेव होइ थिमिए य।
अयले कंपिल्ले खलु, अक्खोभ पसेणई विण्हू ।१।

अर्थ---जम्बू स्वामी के उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए

कोई-कोई 'अंतकृत' शब्द का ऐसा अर्थ करते है कि--'जो महा-पुरुष अन्तिम श्वासोच्छ्वास मे केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष मे गये है, उन्हे अन्तकृत कहते है।' किंतु यह अर्थ शास्त्र-सम्मत नही है। क्योकि केवलज्ञान होते ही तेरहवाँ गुणस्थान गिना जाता है। १३ वे गुणस्थान का नाम 'सयोगी केवली गुणस्थान' है। इस गुणस्थान मे योगो की प्रवृत्ति रहती है। इसके अन्त मे योगो का निरोध कर १४ वे गुणस्थान मे जाते हैं। इसलिये अंतिम श्वासोच्छ्वास मे केवलज्ञान उत्पन्न होने की बात कहना ठीक नही है। केवलज्ञान होने के बाद १३ वे गुणस्थान मे कुछ ठहर कर उसके बाद 'अयोगी-केवली' नामक १४ वाँ गुणस्थान प्राप्त होता है। अत टीकाकार ने जो अर्थ किया है, वही ठीक है। इस प्रकार भव (चतुर्गति रूप ससार) का अन्त करने वाली महान् आत्माओ मे से कुछ महान् आत्माओ के जीवन का वर्णन इस सूत्र मे दिया गया है। इसलिये इसे 'अन्तकृतदशा सूत्र' कहते है।

आर्य सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं कि–हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने ८ वें अंग अन्तकृतदशा सूत्र के आठ + वर्ग कहे हैं।

हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृतदशा नामक ८ वें अंग में आठ वर्गो का प्रतिपादन किया है। उनमे से प्रथम वर्ग के कितने अध्ययन कहे है ?

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृतदशा नामक ८ वें अंग के प्रथम वर्ग में दस अध्ययन कहे हैं। वे इस प्रकार हैं––

१ गौतम २ समुद्र ३ सागर ४ गम्भीर ५ स्तिमित ६ अचल ७ कम्पिल ८ अक्षोभ ९ प्रसेनजित और १० विष्णुकुमार।

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा–गोयमा जाव विण्हू।

पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था, दुवालस जोयणायामा णवजोयणविच्छिण्णा धणवइ-मइ-णिम्मिया चामीगरपागारा

+ अध्ययनो के समूह को 'वर्ग' कहते है।

णाणामणि पंचवण्ण कविसीसग परिमंडिया सुरम्मा अलकापुरी संकासा पमुइय पक्कीलिया पच्चक्खं देवलोग-भूया पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ॥४॥

अर्थ---जम्बू स्वामी फिर प्रश्न करते है कि--हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृतदशा नामक ८ वे अग के प्रथम वर्ग में दस अध्ययन कहे है, तो उनमें से प्रथम अध्ययन में क्या भाव है ?

श्री सुधर्मा स्वामी फरमाते है कि--हे आयुष्यमान् जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृतदशा नामक आठवें अग के प्रथम वर्ग के पहले अध्ययन मे ये भाव कहे हैं---

हे जम्बू ! इस अवसर्पिणीकाल के चौथे आरे मे जब २२ वें तीर्थंकर भगवान् अरिष्ट नेमिनाथ स्वामी इस भूमण्डल पर विचरते थे, उस समय सौराष्ट्र देश की राजधानी 'द्वारिका' नाम की नगरी थी । वह बारह योजन लम्बी और नौ यौजन चौड़ी थी । वह धनपति अर्थात् वैश्रमण (कुबेर) के अत्यन्त वुद्धि-कौशल द्वारा बनाई गई थी । वह स्वर्ण के परकोटे से घिरी हुई थी । इन्द्रनील मणि, वैडूर्य मणि, पद्मराग मणि आदि नाना प्रकार की पॉच वर्ण की मणियों से जड़े हुए कपिशीर्षक (कंगूरों) से सुसज्जित, शोभनीय एवं सुरम्य थी । जिसकी उपमा अलकापुरी (कुबेर की नगरी) से दी जाती थी । उस नगरी के निवासी सुखी होने से प्रमुदित---हर्षित और क्रीड़ा करने वाले थे, इसलिये वह नगरी भी प्रमुदित और क्रीड़ा-

कारक थी एवं आमोद प्रमोद और क्रीड़ा की सामग्रियों से परिपूर्ण थी। अतएव वह प्रत्यक्ष देवलोक समान थी। वह प्रासादीय (दर्शकों के मन को प्रसन्न करने वाली) और दर्शनीय थी। वह अभिरूप (प्रतिक्षण नवीन रूप वाली) और प्रतिरूप (सर्वोत्तम--असाधारण) रूप वाली सर्वांग सौन्दर्य-पूर्ण देदीप्यमान थी ॥ ४ ॥

तीसे णं बारवईए णयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं रेवयए णामं पव्वए होत्था, वण्णओ। तत्थ णं रेवयए पव्वए णंदणवणे णामं उज्जाणे होत्था, वण्णओ। सुरप्पिए णामं जक्खाययणे होत्था, पोराणे। से णं एगेणं वणसंडेणं परिक्खित्ते, असोगवरपायवे।

तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे णामं वासुदेवे राया परिवसइ, महयाहिमवंत रायवण्णओ।

से णं तत्थ समुद्दविजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं, बलदेवपामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं, पज्जुण्णपामोक्खाणं अद्धुट्ठाणं कुमारकोडीणं, संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंत साहस्सीणं, महासेणपामोक्खाणं छप्पण्णाए बल-वग्गसाहस्सीणं, वीरसेणपामोक्खाणं एगवीसाए वीर-साहस्सीणं उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं रायसाह-स्सीणं रुप्पिणीपामोक्खाणं सोलसण्हं देवीसाहस्सीणं,

अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं, अण्णेसिं च बहूणं ईसर जाव सत्थवाहाणं बारवईए णयरीए अद्धभरहस्स य समत्तस्स आहेवच्चं जाव विहरइ ॥५॥

अर्थ--उस द्वारिका नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) में 'रैवतक' नामक पर्वत था। उस पर्वत पर नन्दन-वन नामक उद्यान था, जिसका पूरा वर्णन अन्य सूत्रों से जानना चाहिए। उस उद्यान में सुरप्रिय नाम के यक्ष का यक्षायतन था। वह बहुत प्राचीन था। उस उद्यान मे वनखण्ड से घिरा हुआ एक अशोक वृक्ष था।

उस द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव राज करते थे। जिस प्रकार महा हिमवान् पर्वत, क्षेत्रों की मर्यादा करता है, उसी प्रकार कृष्ण वासुदेव, लोक मर्यादा को नियत एवं स्थिर करने वाले और लोक मर्यादा के पालक थे।

द्वारिका नगरी में समुद्रविजय आदि दस दशार्ह* और बलदेव आदि पाँच महावीर थे। प्रद्युम्न आदि साढे तीन करोड़ कुमार थे। शत्रुओं से कभी पराजित न हो सकने वाले

---

* दशार्ह--जिनकी सख्या दस हो और जो पूज्य हों, उन्हे दशार्ह कहते हैं। वे दस इस प्रकार है--१ समुद्रविजय २ अक्षोभ ३ स्तिमित ४ सागर ५ हिमवान् ६ अचल ७ धरण ८ पूरण ९ अभिचन्द्र और १० वसुदेव। वसुदेवजी के कुन्ती और माद्री ये दो छोटी बहिने थी। बलदेव और वासुदेव के परिवार को भी 'दशार्ह' कहते है।

साम्ब आदि साठ हजार शूरवीर थे। महासेन आदि सेनापतियों की अधीनता में रहने वाला छप्पन हजार बलवर्ग (सैनिक दल) था। वीरसेन आदि इक्कीस हजार कार्यकुशल वीर थे। उग्रसेन आदि सोलह हजार राजा थे। रुक्मिणी आदि सोलह हजार रानियाँ थी। चौसठ कलाओ में निपुण ऐसी अनगसेना आदि अनेक गणिकाएँ थी और भी बहुत-से ऐश्वर्यशाली नागरिक, नगर-रक्षक, सीमान्त-राजा सेठ, सेनापति और सार्थवाह आदि थे।

ऐसे परम प्रतापी कृष्ण-वासुदेव द्वारिका से ले कर क्षेत्र की मर्यादा करने वाले वैताढ्य पर्वत पर्यन्त अर्द्ध भरत (भरत क्षेत्र के तीन खण्ड) का एक छत्र राज करते थे ॥५॥

तत्थ णं बारवईए णयरीए अंधगवण्ही णामं राया परिवसइ, महया हिमवंत वण्णओ। तस्स णं अंधगवण्हिस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ।

तए णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि एवं जहा महब्बले—

गाहा—सुमिणदंसणकहणा, जम्मं बालत्तणं कलाओ य।
जोव्वण-पाणिग्गहणं, कंता पासाय भोगा य ।१।

णवरं गोयमो णामेणं, अट्ठण्हं रायवरकण्णाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हावेंति, अट्ठट्ठओ दाओ ॥६॥

अर्थ—उस द्वारिका नगरी मे महा हिमवान् मन्दर आदि

पर्वतों के समान स्थिर एवं मर्यादा-पालक तथा बलशाली 'अंधकवृष्णि' नाम के राजा थे। स्त्रियों के सभी लक्षणों से युक्त उनकी धारिणी नाम की रानी थी। वह धारिणी रानी किसी समय पुण्यात्माओं के शयन करने योग्य और कोमलता आदि गुणों से युक्त शय्या पर सोई हुई थी। उस समय उसने एक शुभ स्वप्न देखा। स्वप्न देख कर रानी जाग्रत हुई। उसने राजा के पास जा कर अपना देखा हुआ स्वप्न सुनाया। राजा ने स्वप्न का फल बतलाया, यथासमय रानी ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। बालक का बाल्यकाल बहुत सुखपूर्वक बीता। उसने गणित, लेख आदि बहत्तर कलाओं को सीखा। उसके बाद युवावस्था होने पर उसका विवाह हुआ। उसका भवन बहुत सुन्दर था और उसकी भोगोपभोग सामग्रियाँ चित्ता-कर्षक थी। इन सब बातों का विस्तृत वर्णन भगवती सूत्र में दिये महाबल कुमार के वर्णन के समान समझना चाहिए। अतर इतना है कि इनका नाम 'गौतम' था। माता-पिता ने एक ही दिन में आठ सुन्दर राजकन्याओं के साथ इनका विवाह कराया। विवाह में आठ कोटि हिरण्य (चाँदी) आठ कोटि सुवर्ण आदि आठ-आठ वस्तुएँ इन्हे दहेज में मिली ॥६॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी आइ-गरे जाव विहरइ। चउव्विहा देवा आगया। कण्हे वि णिग्गए। तएणं से गोयमे कुमारे जहा मेहे तहा णिग्गए। धम्मं सोच्चा णिसम्म जं णवरं देवाणुप्पिया! अम्मा-

पियरो आपुच्छामि, देवाणुप्पियाणं अंतिए पव्वयामि। एवं जहा मेहे जाव अणगारे जाए, इरियासमिए जाव इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ।

तएणं से गोयमे अणगारे अण्णयाकयाइं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तएणं अरहा अरिट्ठणेमी अण्णया कयाइं बारवईओ णयरीओ णंदणवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवय विहारं विहरइ ॥७॥

अर्थ—उस काल उस समय मे अपने शासन की अपेक्षा से धर्म की आदि करने वाले, बाईसवें तीर्थंकर भगवान् अरिष्टनेमि, तीर्थंकर परम्परा से विचरते हुए द्वारिका नगरी के बाहर नन्दनवन नामक उद्यान में पधारे। वहां भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक ये चारों प्रकार के देव तथा मनुष्य और तिर्यञ्च, भगवान् की धर्म-कथा सुनने के लिए आये। कृष्ण-वासुदेव भी अपने भवन से निकल कर भगवान् के समीप धर्म श्रवण करने के लिए पहुँचे। ज्ञातासूत्र के प्रथम अध्ययन में वर्णित मेघकुमार के समान गौतमकुमार भी, धर्म-कथा सुनने के लिए आये। धर्म कथा सुन कर और उसे हृदय मे धारण कर के गौतमकुमार ने भगवान् से प्रार्थना की

कि 'हे भगवन्! मै अपने माता-पिता से पूछ कर आपके पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।' इसके बाद गौतमकुमार के अनगार होने तक का वृत्तान्त ज्ञातासूत्र के प्रथम अध्ययन में वर्णित मेघकुमार के समान समझना चाहिये। जैसे मेघकुमार वैराग्य प्राप्त कर, माता पिता के बहुत समझाने पर भी भोग-विलास की समस्त सामग्रीं को छोड़ कर अनगार बन गए, उसी प्रकार गौतमकुमार भी अनगार बन गए। अनगार बनने के बाद ईर्या-समिति, भाषासमिति आदि से ले कर निर्ग्रंथ-प्रवचन को आगे रख कर (भगवान् के कहे हुए प्रवचनों का पालन करते हुए) विचरने लगे। उसके बाद गौतम अनगार किसी समय में अरि-हंत भगवान् अरिष्टनेमि के गीतार्थ स्थविर साधुओं के समीप सावद्ययोग परिवर्जन निरवद्य योग सेवन रूप सामायिक आदि छह आवश्यक तथा ११ अंगो का अध्ययन किया। अध्ययन कर के बहुत-से चतुर्थभक्त (उपवास), षष्ठभक्त (बेला), अष्टभक्त (तेला), दशमभक्त (चोला), द्वादशभक्त (पचोला), अर्द्धमास और मासखमण आदि तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। अरिहंत भगवान् अरिष्टनेमि ने द्वारिका नगरी के नन्दन वन उद्यान से विहार कर दिया और धर्मोपदेश करते हुए विचरण करने लगे॥७॥

तएणं से गोयमे अणगारे अण्णयाकयाइं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता, अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता

वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-- इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए । एवं जहा खंदओ तहा बारस भिक्खुपडिमाओ फासेइ, फासित्ता गुणरयणं वि तवोकम्मं तहेव फासेइ, णिरवसेसं एवं जहा खंदओ तहा चिंतइ, तहा आपुच्छइ तहा थेरेहिं सद्धिं सेत्तुंजं दुरूहइ, मासियाए संलेहणाए बारस वरिसाइं परियाए जाव सिद्धे ॥८॥

अर्थ--एक दिन गौतम अनगार अरिहन्त अरिष्टनेमि के समीप आये और भगवान् अरिष्टनेमि को तीन बार+ आदक्षिण-प्रदक्षिण किया । आदक्षिण-प्रदक्षिण कर के गौतमकुमार ने भगवान् को वन्दना नमस्कार किया और वे इस प्रकार निवेदन करने लगे-"हे भगवन् ! आपकी आज्ञा हो, तो मै मासिकी/ भिक्षु-प्रतिमा स्वीकार करूँ।" भगवान् ने फरमाया--"जैसे सुख हो वैसे करो।" भगवान् की आज्ञा पा कर गौतम अनगार ने भगवती सूत्र शतक २ उद्देशक १ में वर्णित स्कन्दक मुनि के

+ दोनो हाथ जोड़ने को 'अञ्जलिपुट' कहते है । अञ्जलिपुट को अपने दाहिने कान से ले कर सिर पर घुमाते हुए बाये कान तक ले जा कर फिर उसे घुमाते हुए दाहिने कान पर ले जावे और बाद मे उसे अपने ललाट पर स्थापन करे, इसे 'आदक्षिण-प्रदक्षिण' कहते है ।

/ भिक्षुप्रतिमा की विधि दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र दशा ७ मे देखो ।

समान बारह भिक्षु-प्रतिमा का सम्यक् आराधन किया और स्कन्दक मुनि के समान ही गुणरत्न सवत्सर× नामक तप का भी पूर्ण रूप से आराधन किया। जिस प्रकार स्कन्दक मुनि ने विचार कर के भगवान् से पूछा, उसी प्रकार गौतम अनगार ने भी विचार किया और भगवान् से पूछा। स्कन्दक मुनि विपुल पर्वत पर गये, उसी प्रकार गौतम मुनि भी स्थविरो के साथ शत्रुञ्जय पर्वत पर गये और बारह वर्ष की दीक्षा पर्याय का पालन कर मासिक सलेखना कर के सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए ।८।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। पढमं अज्झयणं समत्तं।

एवं जहा गोयमो तहा सेसा वि वण्ही पिया, धारिणी माया, समुद्दे, सागरे, गम्भीरे, थिमिए, अयले, कंपिल्ले, अक्खोभे, पसेणई, विण्हुए, एए एगगमा। पढमो वग्गो, दस अज्झयणा पण्णत्ता ॥९॥

अर्थ—श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते है—'हे आयुष्मन् जम्बू ! सिद्धगति नामक स्थान को

× प्राचीन धारणा के अनुसार तो पडिमाओ का उपरोक्त काल है जो कि एक ऋतुबद्ध काल में (८ महीनो मे) पूरा हो जाता है। टीकाकार इसका काल नौ वर्ष भी बताते है। किन्तु प्राचीन धारणा ही ठीक मालूम होती है।

प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तगडदशा नामक आठवें अग के प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में गौतमकुमार के मोक्ष प्राप्ति का वर्णन किया है ।'

जिस प्रकार गौतमकुमार के प्रथम अध्ययन का वर्णन किया है, उसी प्रकार शेष समुद्रकुमार आदि के नौ अध्ययनों का वर्णन भी जानना चाहिये । कुमारों के नाम इस प्रकार है–२ समुद्रकुमार ३ सागरकुमार ४ गम्भीरकुमार ५ स्तिमित कुमार ६ अचलकुमार ७ कम्पिलकुमार ८ अक्षोभकुमार ९ प्रमेनजितकुमार और १० विष्णुकुमार ।

इन सब के पिता का नाम 'अन्धकवृष्णि' और माता का नाम 'धारिणी' है । इसके अतिरिक्त इन नौ अध्ययनो में कोई भेद नही है । सब का वर्णन एक समान है ।

हे जम्बू ! इस प्रकार प्रथम वर्ग के दस अध्ययनों का प्रतिपादन किया गया है ।

—: इति प्रथम वर्ग समाप्त :—
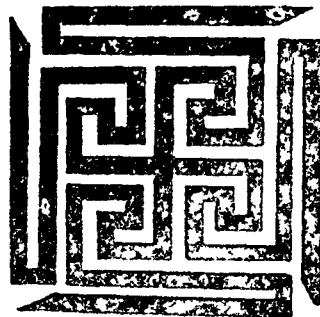
द्वितीय वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, दोच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठ अज्झ-यणा पण्णत्ता, तंजहा—

अक्खोभे सागरे खलु, समुद्द हिमवंत अयलणामे य ।
धरणे य पूरणे वि य, अभिचंदे चेव अट्ठमए ॥१॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए वण्ही पिया, धारिणी माया । जहा पढमो वग्गो तहा सव्वे । अट्ठ अज्झयणा गुणरयणतवोकम्मं, सोलस-वासाइं परि-याओ, सेत्तुंजे मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धा ।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥१॥

॥ इइ दोच्चो वग्गो अट्ठ अज्झयणा समत्ता ॥

अर्थ—जम्बू स्वामी, अपने गुरु श्रीसुधर्मा स्वामी से पूछते है कि—हे भगवन् ! सिद्धगति को प्राप्त श्रमण भगवान् महा-वीर स्वामी ने प्रथम वर्ग में गौतम आदि दस कुमारों के मोक्ष

प्राप्ति पर्यन्त वर्णन किया, वह मैने सुना। उसके बाद अंतगड-दसा के दूसरे वर्ग मे कितने अध्ययनों का प्रतिपादन किया है?

श्रीसुधर्मा स्वामी कहते है कि—हे जम्बू! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने दूसरे वर्ग मे आठ अध्ययनो का वर्णन किया है। वे इस प्रकार है—१ अक्षोभ २ सागर ३ समुद्र ४ हिमवान् ५ अचल ६ धरण ७ पूरण और ८ अभिचन्द।

जिस समय भगवान् अरिष्टनेमि विचरते थे, उस समय द्वारिका नगरी में अन्धकवृष्णि* नाम के एक राजा रहते थे।

---

* प्रथम वर्ग मे जिनका वर्णन किया है, वे गौतमकुमार आदि दस और द्वितीय वर्ग मे जिनका वर्णन किया है, वे अक्षोभकुमार आदि आठ, ये अठारह कुमार सगे भाई थे। इनके पिता का नाम अन्धकवृष्णि और माता का नाम धारिणी था।

यही वात पूज्य श्रीजयमलजी महाराज ने अपनी वडी साधु-वन्दना मे कही है—

"गौतमादिक कुँवर, सगा अठारह भ्रात।
अन्धकविष्णु सुत, धारिणी ज्यॉरी मात॥

परन्तु श्री दलपतरायजी कृत 'नव तत्त्व प्रश्नोत्तरी' मे बताया है कि—गौतमकुमार आदि दस अन्धकवृष्णि के 'पुत्र' थे और अक्षोभकुमार आदि आठ अन्धकवृष्णि के 'पौत्र' थे। अर्थात् अन्धकवृष्णि के जिन दस पुत्रो का वर्णन पहले वर्ग मे किया है, उनमे से १० वे पुत्र विष्णुकुमार के ये अक्षोभकुमार आदि आठ पुत्र थे। इस प्रकार अक्षोभ आदि आठ कुमार अन्धकवृष्णि के पौत्र है।

शास्त्र के मूलपाठ पर विचार करने से तो यही ज्ञात होता है कि ये अठारह सगे भाई थे। क्योकि प्रथम वर्ग मे और द्वितीय वर्ग मे दोनो

उनके धारिणी नाम की रानी थी। उनके अक्षोभ, सागर, समुद्र, हिमवान्, अचल, धरण, पूरण और अभिचन्द नाम के आठ पुत्र थे।

प्रथम-वर्ग में गौतमादि अध्ययन के समान अक्षोभ आदि आठ अध्ययन भी है। गौतम आदि दस कुमारों के समान इन्होंने भी 'गुणरत्न-संवत्सर' तप किया। सोलह वर्ष तक दीक्षा-पर्याय का पालन किया और शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना कर के सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदसा नामक आठवें अग के दूसरे वर्ग में उपरोक्त अर्थ का प्रतिपादन किया है।

॥ इति द्वितीय वर्ग समाप्त ॥

जगह 'वण्ही पिया' ऐसा पाठ दिया है। 'वृष्णि' शब्द का प्राकृत मे वण्हि रूप बनता है परन्तु विष्णु शब्द का 'वण्हि' रूप नहीं बनता। 'विष्णु' शब्द का "विण्हु" रूप बनता है,

तृतीय वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। तच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा——१ अणीयसेणे २ अणंतसेणे ३ अजियसेणे ४ अणिहयरिउ ५ देवसेणे ६ सत्तुसेणे ७ सारणे ८ गए ९ सुमुहे १० दुम्मुहे ११ कूवए १२ दारुए १३ अणादिट्ठी।

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—अणीयसेणे जाव अणादिट्ठी। पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी, श्रीसुधर्मा स्वामी से पूछते है कि—— हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदसा नामक ८ वें अंग के तीसरे वर्ग के क्या भाव कहे है ?

श्री सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी से कहते है कि——हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने तीसरे वर्ग में तेरह

अध्ययनों का वर्णन किया है। वे इस प्रकार है--

१ अनीकसेन २ अनन्तसेन ३ अजितसेन ४ अनिहतरिपु ५ देवसेन ६ शत्रुसेन ७ सारण ८ गज ९ सुमुख १० दुर्मुख ११ कूपक १२ दारुक और १३ अनादृष्टि।

हे भगवन् ! इस तीसरे वर्ग मे श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने तेरह अध्ययनों का वर्णन किया है, तो प्रथम अध्ययन का क्या भाव प्रतिपादन किया है ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिल-पुरे णामं णयरे होत्था, रिद्धत्थिमिय-समिद्धे वण्णओ। तस्सणं भद्दिलपुरस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए सिरीवणे णामं उज्जाणे होत्था, वण्णओ। जियसत्तु राया। तत्थ णं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई होत्था, अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स पुत्ते सुल-साए भारियाए अत्तए अणीयसेणे णामं कुमारे होत्था, सुकुमाले जाव सुरूवे पंचधाइ परिक्खित्ते। तंजहा-- खीरधाई, मज्जणधाई, मंडणधाई, कीलावणधाई, अंक-धाई, जहा दढपइण्णे जाव गिरिकंदरमल्लीणेव चंपग-वरपायवे सुहंसुहेणं परिवड्ढइ॥ २॥

अर्थ--हे जम्बू ! उस काल उस समय में 'भद्दिलपुर'

नाम का नगर था। वह नगर उत्तम नगरों के सभी गुणों से युक्त एवं धन-धान्यादि से परिपूर्ण था।

उस भद्दिलपुर नगर के बाहर ईशान-कोण में सभी गुणो से युक्त श्रीवन नाम का उद्यान था। नगर मे जितशत्रु राजा राज करता था। उसी नगर मे 'नाग' नाम का एक गाथापति रहता था। वह अतीव समृद्धिशाली और अपरिभूत (जिसका कोई भी पराभव–अपमान नही कर सकता) था। उसकी पत्नी का नाम 'सुलसा' था, जो अत्यन्त सुकुमाल एव सुरूप थी। नाग गाथापति का पुत्र एव सुलसा का अगजात 'अनीक-सेन' नाम का कुमार था। जिसके हाथ-पाँव अत्यंत सुकुमाल थे और वह अत्यन्त सुरूप था। १ क्षीर-धात्री (दूध पिलाने वाली धायमाता), २ मज्जनधात्री (स्नान कराने वाली धाय-माता), ३मण्डन-धात्री (वस्त्र-अलंकार आदि से विभूषित करने वाली धायमाता), ४ क्रीडन-धात्री (क्रीड़ा कराने वाली धायमाता) और ५ अंक-धात्री (गोद मे उठाने वाली धाय-माता) इन पाँच प्रकार की धायमाताओं से उसकी–दृढ-प्रतिज्ञ कुमार* के समान प्रतिपालना की जाती थी। जिस प्रकार पर्वत की गुफा में रही हुई मनोहर चपक-लता सुरक्षित रूप से बढ़ती है, उसी प्रकार अनीकसेन कुमार भी सुखपूर्वक बढ़ने लगा ॥ २ ॥

तएणं तं अणीयसेणं कुमारं साइरेग अट्ठवासजायं

* दृढ़प्रतिज्ञ कुमार का वर्णन 'रायप्रश्नीय सूत्र' मे है।

अम्मापियरो कलायरिय जाव भोगसमत्थे जाए यावि होत्था । तएणं तं अणीयसेणं कुमारं उम्मुक्कबालभावं जाणित्ता अम्मापियरो सरिसियाणं सरिसव्वयाणं सरिसत्तयाणं सरिसलावण्णरूवजोव्वणगुणोववेयाणं सरिसेहिंतो कुलेहिंतो आणिल्लियाणं बत्तीसाए इब्भ-वरकण्णगाणं एगदिवसे पाणिं गिण्हावेंति ॥३॥

अर्थ—अनीकसेन कुमार की उम्र ८ वर्ष से कुछ अधिक हो गई, तो उसके माता-पिता ने उसे शिक्षा प्राप्त करने के लिये कलाचार्य के पास भेजा । थोड़े ही समय में वह सभी कलाओ मे पारगत हो गया और युवावस्था को प्राप्त हुआ ।

अनीकसेन कुमार को यौवनावस्था से युक्त देख कर उसके माता-पिता ने समान वय, समान त्वचा और समान लावण्य, रूप-यौवन एव सुशीलता आदि गुणों से युक्त तथा अपने सदृश्य कुलो से लाई हुई, इभ्य-सेठो की बत्तीस कन्याओं के साथ, एक दिन मे विवाह कर दिया ॥ ३ ॥

तएणं से णागे गाहावई अणीयसेणस्स कुमारस्स इमं एयारूवं पीइदाणं दलयइ, तं जहा—बत्तीसं हिरण्ण-कोडिओ जहा महब्बलस्स जाव उप्पिपासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं भोगभोगाइं भुंजमाणे विह-रइ । तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी जाव समोसढे, सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं जाव

विहरइ । परिसा णिग्गया ।

तएणं तस्स अणीयसेणस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं जहा गोयमे तहा णवरं सामाइयमाइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ । वीसं वासाइं परियाओ, सेसं तहेव जाव सेत्तुंजे पव्वए मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे ।

एवं खलु ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥४॥

अर्थ—नाग गाथापति ने सोना, चाँदी आदि का बत्तीस-बत्तीस करोड़ धन अनीकसेन कुमार के लिए प्रीतिदान दिया, जैसा कि महाबलकुमार* के लिये उसके पिता ने किया था। अनीकसेन कुमार भी महाबलकुमार के समान भवन के ऊपर के खंड मे निरंतर बजती हुई मृदगों से यावत् पूर्व पुण्योपार्जित मनुष्य सम्बन्धी भोग भोगते हुए सुखपूर्वक रहता था।

उस काल उस समय में अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान् उस भद्दिलपुर नगर के बाहर श्रीवन नामक उद्यान में पधारे और अपनी मर्यादा के अनुसार अवग्रह ले कर विचरने लगे। जनसमुदाय रूप परिषद् धर्म-कथा सुनने के लिए अपने-अपने घर से निकली। जन-समुदाय का कोलाहल सुन कर अनीक-सेन कुमार भी गौतम कुमार के समान अपने भवन से निकला और

* महाबलकुमार का वर्णन भगवती सूत्र श० ११ उ० ११ मे है।

भगवान् के समीप आ कर धर्म-कथा सुनी तथा माता पिता की आज्ञा प्राप्त कर दीक्षा धारण कर ली। गौतमकुमार के अध्ययन से इसमें यह विशेषता है कि इन्होंने सामायिक आदि चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। बीस वर्ष दीक्षा-पर्याय का पालन किया और शत्रुञ्जय पर्वत पर जा कर एक मास की संलेखना कर के सिद्ध बुद्ध मुक्त हुए। शेष सारा अधिकार गौतम कुमार के समान है×।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि--"हे जम्बू! सिद्ध-गति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अतगडदसा के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन मे अनीकसेन कुमार का उपर्युक्त वर्णन किया है।"

।। इति तीसरे वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त ।।

जहा अणीयसेणे एवं सेसा वि अणंतसेणे अजियसेणे अणिहयरिऊ देवसेणे सत्तुसेणे छ अज्झयणा एगगमा। बत्तीसाओ दाओ वीसं वासाइं परियाओ, चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जंति, जाव सेत्तुंजे सिद्धा। छट्ठमज्झयणं समत्तं।

अर्थ--जैसा अनीकसेन कुमार का अध्ययन है, वैसा ही अनन्तसेन, अजितसेन, अनिहतरिपु, देवसेन और शत्रुसेन नामक अध्ययनों का वर्णन है। इन छहों अध्ययनों का वर्णन एक

× गौतमकुमार ने सामायिकआदि ग्यारह अग पढे थे और सयम का पालन बारह वर्ष किया था। अनीकसेन ने चौदह पूर्व का ज्ञान पढा था और संयम का पालन बीस वर्ष किया था।

समान है। इनके माता-पिता भी एक ही थे। ये छहों कुमार नाग गाथापति के पुत्र एवं सुलसा के अंगजात थे। बत्तीस-बत्तीस करोड़ की दात मिली थी। सभी ने ऋद्धि-सम्पत्ति को छोड़ कर दीक्षा अंगीकार की थी। बीस वर्ष दीक्षा-पर्याय पाली। चौदह पूर्वो का अध्ययन किया। एक मास की संलेखना कर के शत्रुंजय पर्वत पर सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हुए।

॥ इति छह अध्ययन समाप्त ॥

जइ णं भंते ! उक्खेवो सत्तमस्स। तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए जहा पढमे, णवरं वसुदेवे राया, धारिणी देवी, सीहो सुमिणे, सारणे कुमारे, पण्णासओ दाओ, चोद्दस पुव्वाइं, वीसं वासाइं परियाओ, सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे।

॥ सत्तमं अज्झयणं समत्तं ॥

अर्थ--'उक्खेवो'--उत्क्षेप का अर्थ है--'प्रारम्भिक वाक्य'। जिस प्रकार सुधर्मा स्वामी और जम्बू स्वामी के प्रश्नोत्तर के रूप से प्रथम अध्ययन प्रारंभ हुआ है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिए। जम्बू स्वामी, सुधर्मा स्वामी से पूछते है कि—"हे भगवन् ! सिद्ध गति प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदसा के तीसरे वर्ग के छठे अध्ययन का जो भाव कहा, वह मैंने सुना। अब सातवें अध्ययन में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने क्या भाव बताया सो कृपा कर के कहिये।"

श्री सुधर्मा स्वामी कहते है कि—हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें अध्ययन में ये भाव कहे है।

हे जम्बू ! उस काल उस समय मे द्वारिका नाम की नगरी थी। 'वसुदेव' नाम के राजा रहते थे। उनकी रानी का नाम 'धारिणी' था। किसी एक रात्रि के समय उसने सिंह का स्वप्न देखा। गर्भ-काल पूर्ण होने पर उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'सारणकुमार' रखा गया। सारणकुमार ने बहत्तर कलाओ का अध्ययन किया। यौवन अवस्था प्राप्त होने पर माता-पिता ने उसका विवाह किया। पचास करोड़ सोनैया आदि की दात (दहेज) मिली। भगवान् अरिष्टनेमि का उपदेश सुन कर सारणकुमार ने दीक्षा अगीकार की। चौदह पूर्व का अध्ययन किया और बीस वर्ष दीक्षा-पर्याय पाली। अन्त मे गौतम कुमार के समान शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की सलेखना कर के सिद्ध बुद्ध-मुक्त हुए।

॥ इति सातवाँ अध्ययन समाप्त ॥

जइ णं भंते ! उक्खेवो अट्ठमस्स। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमे जाव अरहा अरिट्ठणेमी। सामी समोसढे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतेवासी छ अणगारा भायरो सहोयरा होत्था। सरिसया सरिसत्तया सरिसव्वया णिलुप्पल गवलगुलियअयसिकु-

सुमप्पगासा सिरिवच्छंकियवच्छा कुसुम-कुंडल भद्दलया णलकूबर समाणा ।

अर्थ--आठवें अध्ययन का भी प्रारम्भ वाक्य--'जइ णं भंते ! उक्खेवो' इत्यादि है। इसका अभिप्राय भी पूर्वानुसार है।

जम्बू स्वामी के प्रश्न के उत्तर में श्री सुधर्मा स्वामी कहते है कि--हे जम्बू ! उस काल उस समय मे द्वारिका नाम की नगरी थी । भगवान् अरिष्टनेमि पधारे, इत्यादि वर्णन प्रथम वर्ग के समान है ।

उस काल उस समय में छह सहोदर भाई (एक माता के के उदर से जन्मे हुए) भगवान् अरिष्टनेमि के अतेवासी (शिष्य) थे । वे छहों समान आकार, समान रूप और समान वय वाले थे । उनके शरीर की कान्ति नीलकमल, भैंस के सीग के आन्तरिक भाग और गुली के रग के समान तथा अलसी के फूल के समान नीले रंग वाली थी । उनका वक्ष-स्थल(छाती) 'श्रीवत्स' नामक चिन्ह विशेष से अंकित था । उनके मस्तक के केश फूलों के समान कोमल और कुडल के समान घुमे हुए--घुघराले--तथा अति सुन्दर लगते थे । सौन्दर्यादि गुणों से वे नलकूबर के समान थे ।

तएणं ते छ अणगारा जं चेव दिवसं मुंडा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--इच्छामो णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया

सामी जाव इच्छामो णं भंते ! छट्ठक्खमणस्स पारणए तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा तिहिं संघाडएहिं बारवईए णयरीए जाव अडित्तए । अहासुहं देवाणुप्पिया ! तएणं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा अरहं अरिट्ठणेमि वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहस्संबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमंति पडिणिक्खमित्ता तिहिं संघाडएहिं अतुरियं जाव अडंति ॥२॥

अर्थ--तदनन्तर किसी समय बेले के पारणे के दिन उन छहों अनगारो ने प्रथम प्रहर मे स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर में ध्यान किया और तीसरे प्रहर मे भगवान् के समीप आ कर इस प्रकार बोले--"हे भगवन् ! आपकी आज्ञा हो, तो आज बेले के पारणे मे हम छहों मुनि, तीन सघाड़ो मे विभक्त हो कर, मुनियों के कल्पानुसार सामुदायिक भिक्षा के लिये द्वारिका नगरी मे जावे ।" भगवान् ने कहा--"हे देवानुप्रियों ! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो ।" भगवान् की आज्ञा पा कर उन अनगारों ने भगवान् को वन्दन-नमस्कार किया और सहस्राम्र वन उद्यान के बाहर निकले । दो-दो मुनियों के तीन संघाडे बना कर शीघ्रता-रहित, चपलता-रहित और लाभालाभ की चिन्ता की संभ्रान्ति रहित एवं उद्वेग-रहित वे भिक्षा के लिये द्वारिका नगरी में गये ।

तत्थ णं एगे संघाडए बारवईए णयरीए उच्चणीय-

मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अड-माणे अडमाणे वसुदेवस्स रण्णो देवईए देवीए गिहे अणुप्प-विट्ठे । तए णं सा देवई देवी ते अणगारे एज्जमाणे पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिया पीईमणा परम-सोमणस्सिया हरिसवसविसप्पमाण-हियया आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ, अणु-गच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ-णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहकेसराणं मोयगाणं थालं भरेइ, भरित्ता ते अणगारे पडिलाभेइ पडिलाभित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता पडिविसज्जेइ ॥३॥

अर्थ--उस तीन सघाड़ों मे से एक सघाडा द्वारिका नगरी के ऊँच-नीच और मध्यम-कुलों में गृह-सामुदायिक भिक्षा के लिये घूमता हुआ, राजा वासुदेव और रानी देवकी के घर पहुँचा। उस संघाडे (दो मुनियों) को अपने यहाँ आते हुए देख कर देवकी महारानी अपने आसन से उठी और सात-आठ चरण उनके सामने गई। उन दोनों अनगारों के आकस्मिक आगमन से वह अत्यन्त हर्षित होती हुई बोली—'मै धन्य हूँ, जो मेरे घर अनगार पधारे' इस हेतु संतुष्ट-चित्त के कारण वह अत्यन्त आनन्दित हुई। मुनियों के-पधारने से उसके अन्त:करण में अपूर्व प्रेम उत्पन्न हुआ और मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसका

हृदय हर्षातिरेक से उछलने लगा (अपूर्व आनन्दित हुआ)। विधिपूर्वक वन्दन-नमस्कार कर के वह मुनियो को रसोई-घर मे ले गई। फिर सिहकेसरी मोदक* का थाल भर कर लाई और उन अनगारों को प्रतिलाभित कर (बहरा कर) वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार कर के आदर सहित विनय-पूर्वक उनको विसर्जित किया ॥ ३ ॥

तयाणंतरं च णं दोच्चे संघाडए बारवईए णयरीए उच्च जाव पडिविसज्जेइ।

अर्थ--उसके थोड़ी देर बाद दूसरा सघाड़ा भी ऊँच-नीच-मध्यम कुलों मे घूमता हुआ देवकी महारानी के घर आया। देवकी महारानी ने उसे भी उसी प्रकार सिहकेसरी मोदकों से प्रतिलाभित कर विसर्जित किया।

तयाणंतरं च णं तच्चे संघाडए बारवईए णयरीए उच्चणीय जाव पडिलाभेइ, पडिलाभित्ता एवं वयासी—किण्णं देवाणुप्पिया ! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बार-वईए णयरीए दुवालस-जोयण-आयामाए णवजोयण-विच्छिण्णाए पच्चक्खं देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्चणीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरि-

---

* जिनमे चौरासी प्रकार की विशिष्ट पौष्टिक वस्तुएँ मिला कर तैयार किया जाता है, उन्हे 'सिहकेसरी मोदक' (लड्डू) कहते है। वे कृष्ण-वासुदेव के कलेवे के लिये तैयार किये गये थे।

याए अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति, जण्णं ताइं चेव कुलाइं भत्तपाणाए भुज्जो-भुज्जो अणुप्पविसंति ?।४।

इसके बाद तीसरा संघाड़ा भी उसी प्रकार देवकी महारानी के घर आया। देवकी महारानी ने उसे भी उसी आदर-भाव से सिंहकेसरी मोदक बहराया। इसके बाद वह विनय-पूर्वक पूछने लगी--"हे भगवन् ! कृष्ण-वासुदेव जैसे महाप्रतापी राजा की नौ योजन चौड़ी और बारह योजन लम्बी स्वर्गलोक के सदृश इस द्वारिका नगरी के ऊँच-नीच और मध्यम कुलों में सामुदायिक भिक्षा के लिये घूमते हुए श्रमण-निर्ग्रथों को आहार-पानी नही मिलता है क्या, जिससे एक ही कुल में बार-बार आना पड़ता है ?॥४॥

तए णं ते अणगारा देवइं देवी एवं वयासी--णो खलु देवाणुप्पिये ! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए जाव देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्चणीय जाव अडमाणा भत्तपाणं णो लब्भंति, णो चेव णं ताइं ताइं कुलाइं दोच्चं पि तच्चं पि भत्तपाणाए अणुप्पविसंति। एवं खलु देवाणुप्पिए ! अम्हे भद्दिलपुरे णयरे णागस्स गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए अत्तया छ भायरो सहोयरा सरिसया जाव णलकूबरसमाणा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म संसार-भउव्विग्गा भीया जम्मण-मरणाणं मुंडा जाव पव्वइया।

अर्थ–देवकी देवी का प्रश्न सुन कर वे अनगार इस प्रकार कहने लगे–"हे देवानुप्रिये ! कृष्ण-वासुदेव की स्वर्ग के सदृश इस द्वारिका नगरी में ऊँच-नीच और मध्यम कुलो मे भिक्षार्थ घूमते हुए श्रमण-निर्ग्रंथो को आहार-पानी नही मिलता है, इसलिए वे भिक्षा के लिए एक ही घर मे बार-बार आते है–ऐसी बात नही है। हे देवानुप्रिये ! हमारा रूप, उम्र आदि एक समान होने के कारण तुम्हारे मन में शङ्का उत्पन्न हुई है। इसका समाधान यह है कि–हम भद्दिलपुर नगर निवासी नाग गाथापति के पुत्र एवं सुलसा के अगजात है। हम रूप, लावण्य आदि से समान और सौन्दर्य में नलकूबर के समान छह सहोदर भाई है। हमने भगवान् अरिष्टनेमि से धर्म सुन कर, हृदय मे धारण कर और संसार के भय से उद्विग्न हो कर, जन्म-मरण से छूटकारा पाने के लिये प्रव्रज्या ग्रहण की है।

तए णं अम्हे जं चेव दिवसं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदामो णमंसामो वंदित्ता णमंसित्ता इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हामो––इच्छामो णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा जाव अहासुहं देवाणुप्पिया ! तएणं अम्हे अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरामो। तं अम्हे अज्ज छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए जाव अडमाणा तव गेहं अणुप्पविट्ठा। तं णो

खलु देवाणुप्पिए ! ते चेव णं अम्हे, अम्हे णं अण्णे। देवइं देवीं एवं वयइ, वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगया ॥ ५ ॥

हमने जिस दिन प्रव्रज्या ग्रहण की, उसी दिन से भगवान् की आज्ञा प्राप्त कर के यावज्जीवन बेले-बेले पारणा करने की प्रतिज्ञा की है। उसी प्रतिज्ञानुसार हम बेले-बेले पारणा करते है। हम सब के आज बेले का पारणा है, इसलिए पहले प्रहर में स्वाध्याय और दूसरे प्रहर में ध्यान करने के बाद तीसरे प्रहर मे भगवान् की आज्ञा प्राप्त कर के हम तीन संघाड़ा से निकले। ऊँच-नीच-मध्यम कुलो में सामुदायिक भिक्षा के लिए घूमते हुए सयोगवश हम तीनों सघाड़े तुम्हारे घर आ गये है। इसलिए हे देवानुप्रिये ! हम वे ही मुनि नही है, जो पहले आये थे। हम दूसरे है। सर्व प्रथम सघाड़े में जो मुनि आये, वे दूसरे थे और बीच में (दूसरे संघाड़े में) जो मुनि आये, वे भी दूसरे थे और तीसरे संघाड़े में हम आये हैं, सो हम भी दूसरे है। अत: हे देवानुप्रिये ! हम तुम्हारे घर बार-बार नहीं आये है।" इस प्रकार देवकी देवी से कह कर वे मुनि जिधर से आये थे, उधर ही चले गये ॥ ५ ॥

तएणं तीसे देवइए देवीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे—एवं खलु अहं पोलासपुरे णयरे अइमुत्तेणं कुमारसमणेणं बालत्तणे वागरिया—तुमं णं देवा-

णुप्पिए ! अट्ठ पुत्ते पयाइस्ससि सरिसए जाव णलकूबर-समाणे, णो चेव णं भरहेवासे अण्णाओ अम्मयाओ तारिसए पुत्ते पयायिस्संति, तं णं मिच्छा। इमं णं पच्चक्खमेव दिस्सइ भारहे वासे अण्णाओ वि अम्मयाओ खलु सरिसए जाव पुत्ते पयायाओ। तं गच्छामि णं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदामि णमंसामि वंदित्ता णमंसित्ता इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी--लहुकरण-जाणप्पवर जाव उवट्ठवेंति। जहा देवाणंदा जाव पज्जुवासइ ॥ ६ ॥

अर्थ--उन अनगारों के चले जाने पर देवकी देवी की आत्मा में इस प्रकार मानसिक संकल्प-विकल्प उत्पन्न हुआ कि जब मैं बालक थी, उस समय पोलासपुर नगर मे, अतिमुक्तक अनगार ने मुझे कहा था कि--"हे देवकी ! तू आठ पुत्रों को जन्म देगी। तेरे वे सभी पुत्र आकृति, वय और कान्ति आदि मे समान होंगे और वे नलकूबर के सदृश सुन्दर होंगे। इस भरत क्षेत्र में तेरे सिवाय अन्य कोई माता ऐसी नही होगी, जो ऐसे सुन्दर पुत्रों को जन्म दे सके।"

"मुनियों की वाणी असत्य नहीं होती। परंतु अतिमुक्तक मुनि का वह कथन मिथ्या हुआ है। मै आज यह प्रत्यक्ष देख रही हूँ कि इस भरत क्षेत्र में दूसरी माता ने ऐसे पुत्रों को जन्म

दिया है। अतिमुक्तक मुनि के वचन असत्य नहीं होने चाहिये। इसलिए उचित है कि मैं भगवान् अरिष्टनेमि के पास जाऊँ और उन्हें वन्दन-नमस्कार करके तथा उनसे पूछ कर अपने संदेह को दूर करूँ।" ऐसा विचार कर उसने अपने सेवकों को बुलाया और कहा कि—"हे देवानुप्रिये ! धार्मिक रथ तैयार कर मेरे पास लाओ।" देवकी रानी की यह आज्ञा सुन कर सेवकों ने तुरन्त धार्मिक रथ सजा कर उपस्थित किया। उसके बाद देवकी देवी, भगवान् महावीर स्वामी की माता देवानन्दा के समान रथारूढ़ हो कर भगवान् अरिष्टनेमि के समीप गई और भगवान् को वन्दन-नमस्कार कर के पर्युपासना करने लगी ॥ ६ ॥

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी देवइं देवीं एवं वयासी— "से णूणं तव देवई ! इमे छ अणगारे पासित्ता अयमेया-रूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु पोलास-पुरे णयरे अइमुत्तेणं तं चेव जाव णिगच्छसि, णिग-च्छित्ता जेणेव ममं अंतियं हव्वमागया से णूणं देवई देवि ! अयमट्ठे समट्ठे ?" "हंता अत्थि।"

अर्थ—भगवान् अरिष्टनेमि ने देवकी देवी से इस प्रकार कहा—"हे देवकी ! आज इन छह अनगारों को देख कर तेरे मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ कि 'मुझे पोलासपुर नगर में अतिमुक्तक अनगार ने इस प्रकार कहा था—'हे देवकी ! तू आकृति, वय और कान्ति आदि से एक समान, नलकूबर के सदृश सुन्दर ऐसे आठ पुत्रों को जन्म देगी कि वैसे पुत्रों को इस

भरत क्षेत्र में दूसरी कोई माता जन्म नहीं देगी।" परन्तु दूसरी माता ने भी अतिमुक्तक से कथित लक्षणों वाले पुत्रों को जन्म दिया है। अतिमुक्तक अनगार के वचन असत्य कैसे हुए?" इस शंका का समाधान भगवान् अरिष्टनेमि से प्राप्त करूँ, ऐसा मन में विचार कर के रथ पर चढ़ कर मेरे समीप आई है। क्यों देवकी ! यह बात सत्य है?"

उत्तर में देवकी ने कहा–'हाँ, भगवन् ! आपका कथन सत्य है।'

एवं खलु देवाणुप्पिया ! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई परिवसइ अड्ढे। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था। सा सुलसा गाहावइणी बालत्तणे चेव णिमित्ति-एणं वागरिया एस णं दारिया णिंदू भविस्सइ।

भगवान् ने फरमाया–'हे देवानुप्रिये ! उस काल उस समय में भद्दिलपुर नामक नगर था। वहाँ धन-धान्यादि से सम्पन्न नाग नामक गाथापति रहता था। उसकी पत्नी का नाम सुलसा था। जब सुलसा गाथापत्नी बाल-अवस्था में थी, तब एक भविष्यवक्ता (नैमित्तिक) ने उसके माता-पिता से कहा था कि 'यह कन्या मृतवन्ध्या' होगी।

तए णं सा सुलसा बालप्पभिइं चेव हरिणेगमेसि-देवभत्ता यावि होत्था। हरिणेगमेसिस्स पडिमं करेइ,

करित्ता कल्लाकल्लिं ण्हाया जाव पायच्छित्ता उल्लपडसाडिया महरिहं पुप्फच्चणं करेइ, करित्ता जाणुपायवडिया पणामं करेइ, करित्ता तओ पच्छा आहारेइ वा णीहारेइ वा ॥ ७ ॥

उसके बाद वह सुलसा बालिका अपने बाल्य-काल से ही हरिणगमेषी देव की भक्तिन बन गई। उसने हरिणगमेषी देव की प्रतिमा बनाई और प्रतिदिन स्नान आदि कर के, भीगी साडी पहिने हुए ही वह उस प्रतिमा के सामने फूलों का ढेर करने लगी और अपने दोनों घुटनों को पृथ्वी पर टिका कर नमस्कार करने लगी। आहार-नीहार आदि कार्य वह इसके बाद करती थी ॥ ७ ॥

तए णं तीसे सुलसाए गाहावइणीए भत्तिबहुमाणसुस्सूसाए हरिणेगमेसीदेवे आराहिए यावि होत्था। तए णं से हरिणेगमेसिदेवे सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठाए सुलसं गाहावइणीं तुमं च णं दोण्णि वि समउउयाओ करेइ। तए णं तुब्भे दो वि समसमेव गब्भे गिण्हह, सममेव गब्भे परिवहह, सममेव दारए पयायह। तए णं सा सुलसा गाहावइणी विणिहायमावण्णे दारए पयाइइ। तए णं से हरिणेगमेसि देवे सुलसाए अणुकंपणट्ठाए विणिहायमावण्णए दारए करयलसंपुडेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता तव अंतियं साहरइ। तं समयं च णं तुमं पि

णवण्हं मासाणं सुकुमाल दारए पसवसि । जे वि य णं देवाणुप्पिए ! तव पुत्ता ते वि य तव अंतियाओ करयल संपुडेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता सुलसाए गाहावइणीए अंतिए साहरइ । तं तव चेव णं देवई ! एए पुत्ता, णो चेव सुल्साए गाहावइणीए ॥ ८ ॥

अर्थ–सुलसा द्वारा भक्ति एवं बहुमानपूर्वक की गई शुश्रूषा से हरिणगमेषी देव प्रसन्न हुआ । हरिणगमेषी देव ने सुलसा गाथापत्नी की अनुकम्पा के लिए सुलसा को और तुम्हें एक ही समय में ऋतुमति (रजस्वला) किया । फिर तुम दोनों एक साथ गर्भ धारण करती, एक साथ गर्भ का पालन करती तथा एक साथ बालक को जन्म देती थी। सुलसा के बालक मरे हुए होते थे । हरिणगमेषी देव, सुलसा की अनुकम्पा के लिए उन मरे हुए बालको को अपने दोनों हाथों में उठा कर तुम्हारे पास ले आता था । उसी समय तुम भी नौ मास साढ़े सात रात बीतने पर सुन्दर और सुकुमार पुत्रों को जन्म देती थी। तुम्हारे पुत्रों को दोनों हाथों से उठा कर हरिणगमेषी देव, सुलसा के पास रख देता था । इसलिए हे देवकी ! अतिमुक्तक अनगार के वचन सत्य है । ये सभी पुत्र तुम्हारे ही है, सुलसा के नही। इन सभी को तुमने ही जन्म दिया है, सुलसा ने नहीं ।

तए णं सा देवई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्मं हट्ठतुट्ठ जाव हियया, अरहं

अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव ते छ अणगारा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ते छप्पि अणगारे वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता आगयपण्हुया पप्फूयलोयणा कंचुयपडिक्खित्तिया दरियवलयबाहा धाराहयकलंबपुप्फगं विव समूसियरोमकूवा ते छप्पि अणगारे अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी सुचिरं णिरिक्खइ, णिरिक्खित्ता वंदइ णमंसइ।

अर्थ—भगवान् अरिष्टनेमि का उत्तर सुन कर देवकी देवी अत्यन्त प्रसन्न हुई और भगवान् को वन्दन-नमस्कार कर के वहां गई—जहाँ वे छहों अनगार थे। उन अनगारों को देख कर पुत्र-प्रेम के कारण उसके स्तनों से दूध झरने लगा। हर्ष के कारण उसकी आंखों मे आंसू भर आए एवं अत्यंत हर्ष के कारण शरीर फूलने से उसकी कंचुकी की कसें टूट गई और भुजाओं के आभूषण तथा हाथ की चूड़ियाँ तग हो गई। जिस प्रकार वर्षा की धारा पड़ने से कदम्ब पुष्प एक साथ विकसित हो जाते हैं, उसी प्रकार उसके शरीर के सभी रोम पुलकित हो गये। वह उन छहों अनगारों को अनिमेष दृष्टि से देखती हुई बहुत काल तक निरखती रही और बाद में उन्हें वन्दन-नमस्कार किया।

वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमि तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता

णमंसित्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बारवई णयरी अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता जेणेव सए गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव सए वासघरे जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयंसि सयणिज्जंसि णिसीयइ ॥ ९ ॥

छहों मुनियों को वन्दन-नमस्कार कर के भगवान् अरिष्ट-नेमि के समीप आई और भगवान् को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिण कर के वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके अपने धार्मिक रथ पर चढ़ कर द्वारिका नगरी के मध्य मे हो कर क्रमशः अपनी बाहरी उपस्थान शाला (बैठक) के निकट पहुँची। फिर धार्मिक रथ से उतर कर और अपने भवन में प्रवेश कर, सुकोमल शय्या पर बैठी ॥ ९ ॥

तए णं तीसे देवईए देवीए अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पण्णे--एवं खलु अहं सरि-सए जाव णलकूबर-समाणे सत्तपुत्ते पयाया, णो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणए समणुभूए। एस वि य णं कण्हे वासुदेवे छण्हं-छण्हं मासाणं ममं अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छइ। तं धण्णाओ णं ताओ अम्माओ जासिं

मण्णे णियग-कुच्छिसंभूयाइं थणदुद्धलुद्धयाइं महुर समुल्लावयाइं मम्मण-पजंपियाइं थणमूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं पुणो य कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊण उच्छंगे णिवेसियाइं देंति समुल्लावए सुमहुरे पुणो पुणो मंजुलप्पभणिए। अहं णं अधण्णा अपुण्णा अकयपुण्णा एत्तो एगयरमवि ण पत्ता (एवं) ओहयमणसंकप्पा जाव झियायइ ॥ १० ॥

अर्थ---उस समय वह देवकी पुत्र सम्वन्धी चिता से युक्त हो, अभिलषित विचार अपने मन मे इस प्रकार करने लगी--"मैने आकृति, वय और कान्ति में एक समान यावत् नलकूवर के समान सात पुत्रों को जन्म दिया, किंतु उन पुत्रो में से किसी भी पुत्र की बाल-क्रीड़ा के आनन्द का अनुभव नही किया। यह कृष्ण भी मेरे पास चरण-वन्दन के लिये छह-छह महीने के बाद आता है। वास्तव में वे माताएँ धन्य है--भाग्यशालिनी है कि जिनकी कुक्षि से उत्पन्न हुए बच्चे स्तनपान करने के लिये अपनी मनोहर तोतली बोली से आकर्षित करते है और मम्मण शब्द करते हुए स्तनमूल से ले कर कक्ष (काख) तक के भाग में अभिसरण करते रहते है, फिर वे मुग्ध (भोले) वालक अपनी माँ के द्वारा कमल के समान कोमल हाथो से उठा कर गोदी में विठाये जाने पर दूध पीते हुए अपनी माँ से तुतले शब्दों में वातें करते है और मीठी मीठी वोली बोलते है।

"मै अधन्य हूँ, मै अपुण्य हूँ--मैने पुण्य नही किया, इसीसे

मै अपनी सन्तान की बाल-क्रीडा के आनन्द का अनुभव नही कर सकी ।" इस प्रकार वह देवकी खिन्न हृदय हो कर आर्त्त-ध्यान करने लगी ।। १० ।।

इमं च णं से कण्हे-वासुदेवे ण्हाए जाव विभूसिए देवईए देवीए पायवंदए हव्वमागच्छइ । तए णं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं पासइ, पासित्ता देवईए देवीए पाय-ग्गहणं करेइ करित्ता देवइं देविं एवं वयासी--'अण्णया णं अम्मो ! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ठ जाव भवह, किण्णं अम्मो ! अज्ज तुब्भे ओहय जाव झियायह ?'

अर्थ—वह इस प्रकार का चिन्तन कर ही रही थी कि कृष्ण-वासुदेव स्नानादि कर के तथा वस्त्राभूषणो से अलकृत हो कर, देवकी देवी के चरण-वंदन करने के लिए उपस्थित हुए । उन्होंने अपनी माता को उदास एवं चिन्तित देखा । उनके चरणों मे नमस्कार कर वे इस प्रकार पूछने लगे--'हे माता ! जब मै पहले तुम्हारे चरण-वन्दन करने के लिए आता था, तब मुझे देख कर तुम्हारा हृदय आनन्दित हो जाता था, परन्तु आज तुम्हारा मुख उदास और चिन्तित दिखाई दे रहा है । हे माता ! इसका क्या कारण है ?"

तए णं सा देवई देवी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी--एवं खलु अहं पुत्ता ! सरिसए जाव समाणे सत्त पुत्ते पयाया। णो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणे अणुभूए !

तुमं पि य णं पुत्ता ! ममं छण्हं छण्हं मासाणं अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छसि, तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव झियामि ।

तब देवकी देवी ने कहा—"हे पुत्र ! मैंने आकृति, वय और कान्ति में एक समान नलकूबर के सदृश सुन्दर सात पुत्रों को जन्म दिया, परन्तु मैंने एक की भी बाल-क्रीड़ा के आनन्द का अनुभव नहीं किया। हे पुत्र ! तुम भी मेरे पास चरण-वन्दन करने के लिए छह-छह मास में आते हो। इसलिये मैं अनुभव करती हूँ कि वे माताएँ धन्य है, पुण्यशालिनी हैं, उन्होंने पुण्याचरण किया है, जो अपनी संतान की बाल-क्रीड़ा के आनंद का अनुभव करती हैं। मैं अधन्य हूँ, अकृतपुण्य हूँ। इसी बात को सोचती हुई मैं उदासीन हो कर आर्त्तध्यान कर रही हूँ।"

तए णं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं एवं वयासी—मा णं तुब्भे अम्मो ! ओहय जाव झियायह। अहण्णं तहा वत्तिस्सामि जहा णं ममं सहोयरे कणीयसे भाउए भविस्सइ त्ति कट्टु, देवइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव वग्गूहिं समासासेइ, समासासित्ता तओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जहा अभओ, णवरं हरिणेगमेसिस्स अट्ठमभत्तं पगिण्हइ जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी—इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! सहोयरं कणी-

यसं भाउयं विदिण्णं ॥ १२ ॥

अर्थ--माता की बात सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने कहा--"हे माता! अब तुम आर्त्तध्यान मत करो। मै ऐसा प्रयत्न करूँगा कि जिससे मेरे एक सहोदर छोटा भाई उत्पन्न हो।" ऐसा कह कर अभिलषित प्रिय और मधुर वचनो से माता को विश्वास और धैर्य बँधाया। इसके बाद वहाँ से निकल कर कृष्ण वासुदेव पौषधशाला मे आये और जिस प्रकार अभय-कुमार ने अष्टम-भक्त स्वीकार कर के अपने मित्र-देव की आराधना की थी, उसी प्रकार कृष्ण-वासुदेव भी अष्टम-भक्त कर के हरिणगमेषी देव की आराधना करने लगे। आराधना से आकृष्ट हरिणगमेषी देव वहा उपस्थित हुआ और कृष्ण-वासुदेव से इस प्रकार कहने लगा।

"हे देवानुप्रिय! आपने मेरा स्मरण क्यों किया? मै उपस्थित हूँ। कहिये आपका क्या मनोरथ है?" तब कृष्ण-वासुदेव ने दोनों हाथ जोड कर उस देव से ऐसा कहा--"हे देवानुप्रिय! मेरे एक सहोदर लघुभ्राता का जन्म हो, यह मेरी इच्छा है ॥ १२ ॥"

तए णं से हरिणेगमेसी देवे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी--"होहिइ णं देवाणुप्पिया! तव देवलोयचुए सहोयरे कणीयसे भाउए। से णं उम्मुक्कबालभावे जोव्वणगमणुप्पत्ते अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुंडे जाव पव्वइस्सइ।" कण्हं वासुदेवं दोच्चं पि तच्चं पि

एवं वयइ, वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ १३ ॥

अर्थ—इसके बाद उस हरिणगमेषी देव ने कृष्ण-वासुदेव से इस प्रकार कहा—

"हे देवानुप्रिय ! देवलोक का एक देव वहाँ की आयुष्य पूर्ण कर के तुम्हारा सहोदर लघुभ्राता हो कर जन्म लेगा और बाल्यावस्था बीत कर युवावस्था प्राप्त होते ही भगवान् अरिष्ट-नेमि के पास मुण्डित हो कर दीक्षा लेगा।" हरिणगमेषी देव ने कृष्ण-वासुदेव से दो-तीन बार इसी प्रकार कहा और जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर लौट गया ॥ १३ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे पोसहसालाओ पडिणिक्ख-मइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव देवई देवी तेणेव उवा-गच्छइ, उवागच्छित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ, करित्ता एवं वयासी—"होहिइ णं अम्मो ! ममं सहोयरे कणीयसे भाउत्ति कट्टु," देवइं देविं इट्ठाहिं जाव आसा-सइ, आसासित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।

अर्थ—इसके बाद कृष्ण-वासुदेव पौषधशाला से निकल कर देवकी देवी के पास आये और चरण-वन्दन किया और देवकी देवी से इस प्रकार कहा—"हे माता ! मेरे एक सहोदर लघुभ्राता होगा। आप चिन्ता मत करो। आपके

मनोरथ पूर्ण होंगे।" इस प्रकार इष्ट, मनोहर और मनानुकूल वचनों से माता को संतुष्ट कर के वे अपने स्थान चले गये।

तए णं सा देवई देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा जाय हट्ठ-तुट्ठहियया। गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ ॥ १४ ॥

कालान्तर में देवकी देवी सुख-शय्या पर सोई हुई थी, तब उसने सिंह का स्वप्न देखा। स्वप्न के बाद जाग्रत हो कर पति से स्वप्न का वृत्तान्त कहा। अपने मनोरथ की पूर्णता को निश्चित समझ कर देवकी का मन हृष्ट तुष्ट हो गया। वह सुख पूर्वक गर्भ का पालन करने लगी ॥ १४ ॥

तए णं सा देवई देवी णवण्हं मासाणं जासुमणारत्त-बंधुजीवय-लक्खारस-सरस-पारिजातक-तरुण दिवायर-समप्पभं, सव्वणयणकंतं सुकुमालं जाव सुरूवं गयतालुय-समाणं दारयं पयाया। जम्मणं जहा मेहकुमारे जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए गयतालुसमाणे तं होउ णं अम्हं एयस्स दारयस्स णामधेज्जे गयसुकुमाले।

तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामं करेइ गयसुकुमाले त्ति सेसं जहा मेहे जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था।

अर्थ--नौ महिने साढ़े सात दिन बीतने पर देवकी ने अपाकुसुम, वन्धुक पुष्प, लाक्षारस, पारिजात तथा उदय होते

हुए सूर्य के समान प्रभा वाले और सभी के नयन को सुख देने वाले अत्यन्त कोमल यावत् सुरूप एवं गज (हाथी) के तालु के समान सुकोमल वालक को जन्म दिया। जिस प्रकार मेघकुमार के जन्म के समय उनके माता-पिता ने महोत्सव किया, उसी प्रकार देवकी और वासुदेव ने जन्म-महोत्सव किया। उन्होने विचार किया कि यह बालक, गज के तालु के समान सुकोमल है, इसलिए इसका नाम 'गजसुकुमाल' हो। ऐसा विचार कर माता-पिता ने उस वालक का नाम 'गजसुकुमाल' रखा। गजसुकुमाल का बाल्यकाल से ले कर यौवन तक वृत्तान्त मेघकुमार के समान जानना चाहिये।

तत्थ णं बारवईए णयरीए सोमिले णामं माहणे परिवसइ अड्ढे रिउव्वेय जाव सुपरिणिट्ठिए यावि होत्था। तस्स णं सोमिलस्स माहणस्स सोमसिरी णामं माहणी होत्था, सुकुमाला। तस्स णं सोमिलस्स माहणस्स धूया सोमसिरीए माहणीए अत्तया सोमा णामं दारिया होत्था। सुकुमाला जाव सुरूवा, रूवेणं जाव लावण्णेणं उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा यावि होत्था ॥१५॥

अर्थ--उस द्वारिका नगरी में सोमिल नाम का एक ब्राह्मण रहता था। वह धन-धान्यादि से समृद्ध था और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद--इन चारों वेदों का सांगोपांग ज्ञाता था। उस ब्राह्मण की पत्नी का नाम सोमश्री था। वह

अत्यंत सुकुमार एवं सुरूप थी। उस सोमिल ब्राह्मण की पुत्री एवं सोमश्री ब्राह्मणी की अंगजात 'सोमा' नाम की कन्या थी, जो सुकुमार यावत् रूपवती थी और आकृति तथा लावण्य मे उत्कृष्ट थी। वह सोमा बालिका पाँचों इन्द्रियों से परिपूर्ण एवं अवयवो की यथावत् स्थिति के कारण उत्कृष्ट शरीर-शोभा वाली थी ॥ १५ ॥

तए णं सा सोमा-दारिया अण्णया कयाइं ण्हाया जाव विभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रायमग्गंसि कणगतिंदूसएणं कीलमाणी कीलमाणी चिट्ठइ।

अर्थ--एक दिन सोमा बालिका स्नानादि कर के तथा वस्त्राभूषणों से अलंकृत हो कर अनेक कुब्जा दासियों से तथा अन्य दूसरी दासियों से घिरी हुई अपने घर से निकल कर राजमार्ग पर आई और वहाँ सोने की गेंद से खेलने लगी।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा [illegible] स[illegible]
सढे, परिसा णिग्गया। तए णं से क[illegible]
कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए जाव [illegible]
मालेणं कुमारेणं सद्धिं हत्थिखं[illegible]
दामेणं छत्तेणं [illegible]
माणीहिं उ[illegible] बारवईए [illegible]

अरहओ अरिट्ठणेमिस्स पायवंदए णिग्गच्छमाणे सोमं दारियं पासइ, पासित्ता सोमाए दारियाए रूवेण य जोव्वणेण य जाव विम्हिए ॥ १६ ॥

उस काल उस समय मे भगवान् अरिष्टनेमि द्वारिका नगरी में पधारे । परिषद् धर्म-कथा सुनने के लिए गई ।

कृष्ण-वासुदेव ने भी भगवान् का आगमन सुन कर स्नान किया और वस्त्राभूषणों से अलकृत हो कर अपने छोटे भाई गजसुकुमाल के साथ हाथी पर बैठे । कोरण्ट फूलों की माला से युक्त छत्र तथा बिजाते हुए चामरों से सुशोभित कृष्ण-वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य होते हुए भगवान् अरिष्टनेमि की सेवा मे जाने के लिए निकले । कृष्ण-वासुदेव ने राजमार्ग में खेलती हुई उस सोमा कन्या को देखा । उसके रूप लावण्य और कान्ति युक्त यौवन को देख कर कृष्ण-वासुदेव को अत्यन्त आश्चर्य हुआ ॥ १६ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सोमिलं माहणं जाइत्ता सोमं दारियं गिण्हह, गिण्हित्ता कण्णंतेउरंसि पक्खिवह, तए णं एसा गयसुकुमालस्स कुमारस्स भारिया भविस्सइ । तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पक्खिवंति, तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ।

अर्थ--सोमा को देख कर कृष्ण-वासुदेव ने अपने सेवकों को बुला कर इस प्रकार आज्ञा दी कि "हे देवानुप्रिय ! तुम सोमिल ब्राह्मण के पास जाओ और उससे इस कन्या की याचना करो। तत्पश्चात् इस सोमा कन्या को कन्याओ के अन्त पुर मे पहुँचा दो। यह गजसुकुमाल की भार्या होगी।" इस आज्ञा को पा कर वे राज-सेवक सोमिल ब्राह्मण के पास गये और उससे कन्या की याचना की। राज-पुरुषों की बात सुन कर सोमिल ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपनी कन्या को ले जाने की स्वीकृति दे दी। राज-पुरुषों ने सोमा कन्या को ले जा कर कन्याओं के अन्तःपुर में रख दी और कृष्ण-वासुदेव को इस बात की सूचना दे दी।

कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे जाव पज्जुवासइ। तए णं अरहा अरिट्ठणेमि कण्हस्स वासुदेवस्स गयसुकुमालस्स कुमारस्स तीसे य० धम्म-कहा। कण्हे पडिगए ॥ १७ ॥

तत्पश्चात् कृष्ण-वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य में होते हुए सहस्राम्र वन उद्यान मे पहुँचे, भगवान् अरिष्टनेमि को वन्दन-नमस्कार किया और भगवान् की पर्युपासना करने लगे। भगवान् ने कृष्ण-वासुदेव और गजसुकुमाल कुमार तथा विशाल परिषद् को धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुन कर कृष्ण वासुदेव अपने भवन की ओर चले गये ॥ १७ ॥

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं धम्मं सोच्चा जं णवरं अम्मापियरं आपुच्छामि, जहा मेहे णवरं महिलिया वज्जं जाव वड्ढियकुले।

अर्थ--भगवान् का धर्मोपदेश सुन कर कृष्ण-वासुदेव तो चले गए, किन्तु भगवान् की वाणी सुन कर गजसुकुमाल कुमार को वैराग्य उत्पन्न हो गया। उन्होने हाथ जोड़ कर भगवान् से निवेदन किया--"हे भगवन् ! मै अपने माता-पिता से पूछ कर आपके पास दीक्षा ग्रहण करूँगा।" इस प्रकार मेघकुमार के समान भगवान् को निवेदन कर अपने घर आये और माता-पिता के समक्ष अपना अभिप्राय प्रकट किया। माता-पिता ने दीक्षा की वात सुन कर उनसे कहा--"हे वत्स ! तुम हमें वहुत इप्ट एवं प्रिय हो। हम तुम्हारा वियोग सहन करने में समर्थ नही है। अभी तुम्हारा विवाह भी नही हुआ है। इसलिये पहले तुम विवाह करो। कुल की वृद्धि करने के वाद (तुम्हारे पुत्रादि हो जाने पर तथा हमारा स्वर्गवास हो जाने पर) तुम दीक्षा ग्रहण करना।" इस प्रकार माता-पिता ने गजसुकुमाल कुमार से कहा।

तए णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव गयसुकुमाले कुमारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालं कुमारं आलिंगइ, आलिंगित्ता उच्छंगे णिवेसेइ, णिवेसित्ता एवं वयासी—तुमं णं ममं सहोयरे कणीयसे भाया तं मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! इयाणि

अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वयाहि अहण्णं तुमे बारवईए णयरीए महया-महया रायाभि सेएणं अभिसिंचिस्सामि। तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणिए संचिट्ठइ।

जब गजसुकुमाल के वैराग्य की बात कृष्ण-वासुदेव ने सुनी, तो वे तुरन्त गजसुकुमाल के पास आये और उन्होंने स्नेहपूर्वक गजसुकुमाल को हृदय से लगाया और उसे अपनी गोदी मे बिठा कर इस प्रकार बोले—"हे देवानुप्रिय ! तुम मेरे सहोदर छोटे भाई हो। तुम अभी दीक्षा मत लो। मै बड़े ठाट-बाट के साथ तुम्हारा राज्याभिषेक कर के तुम्हे इस द्वारिका का राजा बना दूगा।" कृष्ण-वासुदेव के ये वचन सुन कर गजसुकुमाल कुमार मौन रहे ॥ १८ ॥

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मा पियरो य दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! माणुस्सया कामा असुई असासया वंता-सवा जाव विप्पजहियव्वा भविस्संति। तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए।

अर्थ—उसके वाद गजसुकुमाल कुमार ने कृष्ण-वासुदेव और अपने माता-पिता से दो-तीन वार इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रियों ! काम-भोग का आधारभूत यह स्त्री-पुरुप सम्वन्धी

शरीर मल, मूत्र, कफ, वमन, पित्त, शुक्र और शोणित का भण्डार है। यह शरीर अस्थिर है, अनित्य है तथा सड़न-गलन और नष्ट होने रूप धर्म से युक्त होने के कारण आगे पीछे कभी न कभी अवश्य नष्ट होने वाला है। यह अशुचि का स्थान है, वमन का स्थान है, पित्त, कफ, शुक्र एवं शोणित का भण्डार है। यह शरीर दुर्गन्ध युक्त, मल, मूत्र और पीप आदि से परिपूर्ण है। इस शरीर को पहले या पीछे एक दिन अवश्य छोड़ना ही होगा। इसलिये हे माता-पिता! हे बन्धुवर! मैं आपकी आज्ञा ले कर भगवान् अरिष्टनेमि के समीप दीक्षा लेना चाहता हूँ।"

तए णं तं गयसुकुमालं कुमारं कण्हे वासुदेवे अम्मा-पियरो य जाहे णो संचाएइ बहुयाहिं अणुलोमाहिं जाव आघवित्तए, ताहे अकामाइं चेव एवं वयासी—तं इच्छामो णं ते जाया! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए। णिक्खमणं जहा महब्बलस्स जाव तमाणाए तहा जाव संजमित्तए। से गयसुकुमाले अणगारे जाए इरिया-समिए जाव गुत्तबंभयारी ॥ १९ ॥

जब कृष्ण वासुदेव और राजा वसुदेवजी तथा देवकी रानी, गजसुकुमाल कुमार को अनेक प्रकार के अनुकूल और प्रतिकूल वचनों से भी नही समझा सके, तब असमर्थ हो कर इस प्रकार बोले—

"हे पुत्र! हम लोग तुझे एक दिन के लिये भी राज-

सिंहासन पर बिठा कर तेरी राज्यश्री देखना चाहते है। इसलिये तुम कम-से-कम एक दिन के लिये भी राज्य-लक्ष्मी को स्वीकार करो।"

माता-पिता और बड़े भाई के अनुरोध से गजसुकुमाल चुप रहे। इसके बाद बड़े समारोह के साथ उनका राज्याभिषेक किया गया। गजसुकुमाल के राजा हो जाने के बाद माता-पिता ने पूछा--"हे पुत्र ! तुम क्या चाहते हो ?" गजसुकुमाल ने उत्तर दिया—"मै दीक्षा लेना चाहता हूँ।" तब गजसुकुमाल की आज्ञानुसार दीक्षा की सभी सामग्री मंगाई गई और महाबल के समान दीक्षा अंगीकार कर के गजसुकुमाल अनगार बन गये। वे ईर्यासमिति आदि से युक्त हो कर सभी इन्द्रियों को अपने वश में कर के गुप्त ब्रह्मचारी बन गये ॥ १९ ॥

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दिवसस्स पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव अरहा अरिट्ठणेमि तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे महाकालंसि सुसाणंसि एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए। अहासुहं देवाणुप्पिया !

अर्थ--उसके बाद वे गजसुकुमाल अनगार, जिस दिन प्रव्रजित हुए, उसी दिन, दिन के चौथे प्रहर में भगवान् अरिष्ट-

लौटते हुए सोमिल ने महाकाल श्मशान के पास कायोत्सर्ग कर के ध्यानस्थ खड़े हुए गजसुकुमाल अनगार को देखा। देखते ही उसके हृदय में पूर्वभव का वैर जाग्रत हुआ। वह इस प्रकार कहने लगा–"अरे ! यह वही निर्लज्ज, श्री कान्ति आदि से परिवर्जित अप्रार्थितप्रार्थक (मृत्यु चाहने वाला) गजसुकुमाल कुमार है। यह पुण्यहीन और दुर्लक्षण युक्त है। मेरी भार्या सोमश्री की अगजात एव मेरी निर्दोष पुत्री सोमा जो यौवनावस्था को प्राप्त है, उसे निष्कारण ही छोड़ कर साधु वन गया है।" ॥ २१ ॥

तं सेयं खलु मम गयसुकुमालस्स वेरणिज्जायणं करित्तए, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ, करित्ता सरसं मट्टियं गिण्हइ, गिण्हित्ता जेणेव गयसुकुमाले अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए मट्टियाए पालिं बंधइ, बंधित्ता जलंतीओ चियग्राओ फुल्लियकिंसुयसमाणे खयरंगारे कहल्लेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता भीए तओ खिप्पामेव, अवक्कमइ, अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ २२ ॥

अर्थ–सोमिल ब्राह्मण इस प्रकार विचार करने लगा–मुझे उचित है कि मैं अपने वैर का वदला लूं।" इस प्रकार

अंगुल के अन्तर से दोनों पैरो को सिकोड कर एक पुद्गल पर दृष्टि रखते हुए रात्रि की महाप्रतिमा स्वीकार कर ध्यानस्थ खड़े रहे ॥ २० ॥

इमं च णं सोमिले माहणे सामिधेयस्स अट्ठाए बारवईओ णयरीओ बहिया पुव्वणिग्गए समिहाओ य दब्भे य कुसे य पत्तामोडयं च गिण्हइ, गिण्हित्ता तओ पडिणिवत्तइ ।

अर्थ—गजसुकुमाल अनगार के श्मशान-भूमि मे जाने से पूर्व ही सोमिल ब्राह्मण हवन के निमित्त समिधा (काष्ठ) दर्भ-कुश आदि लाने के लिये द्वारिका नगरी से बाहर निकला था। वह सोमिल ब्राह्मण समिधा, कुश, डाभ और पत्र ले कर अपने घर आ रहा था।

पडिणिवत्तित्ता महाकालस्स सुसाणस्स अदूरसामंतेणं वीइवयमाणे वीइवयमाणे संझाकालसमयंसि पविरलमणुस्संसि गयसुकुमालं अणगारं पासइ, पासित्ता तं वेरं सरइ, सरित्ता आसुरुत्ते एवं वयासी—"एस णं भो ! से गयसुकुमाले कुमारे अपत्थिय जाव परिवज्जिए। जे णं मम धूयं सोमसिरीए भारियाए अत्तयं सोमं दारियं अदिट्ठदोसपइयं कालवत्तिणीं विप्पजहित्ता मुंडे जाव पव्वइए" ॥ २१ ॥

संध्या समय, जब मनुष्यों का आवागमन नहीं था, घर

लौटते हुए सोमिल ने महाकाल श्मशान के पास कायोत्सर्ग कर के ध्यानस्थ खड़े हुए गजसुकुमाल अनगार को देखा। देखते ही उसके हृदय में पूर्वभव का वैर जाग्रत हुआ। वह इस प्रकार कहने लगा-"अरे! यह वही निर्लज्ज, श्री कान्ति आदि से परिवर्जित अप्रार्थितप्रार्थक (मृत्यु चाहने वाला) गजसुकुमाल कुमार है। यह पुण्यहीन और दुर्लक्षण युक्त है। मेरी भार्या सोमश्री की अंगजात एव मेरी निर्दोष पुत्री सोमा जो यौवनावस्था को प्राप्त है, उसे निष्कारण ही छोड़ कर साधु वन गया है।" ॥ २१ ॥

तं सेयं खलु मम गयसुकुमालस्स वेरणिज्जायणं करित्तए, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ, करित्ता सरसं मट्टियं गिण्हइ, गिण्हित्ता जेणेव गयसुकुमाले अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए मट्टियाए पालिं बंधइ, बंधित्ता जलंतीओ चिययाओ फुल्लियकिंसुयसमाणे खयरंगारे कहल्लेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ, पक्खिवित्ता भीए तओ खिप्पामेव, अवक्कमइ, अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ २२ ॥

अर्थ-सोमिल ब्राह्मण इस प्रकार विचार करने लगा-"मुझे उचित है कि मैं अपने वैर का बदला लूं।" इस प्रकार

विचार कर उसने चारों दिशाओं में अच्छी तरह देखा (कि इधर कोई आता-जाता तो नही है)। चारों ओर देख कर उसने पास के तालाब से गीली मिट्टी ली और गजसुकुमाल अनगार के पास आया। उसने गजसुकुमाल अनगार के सिर पर मिट्टी की पाल बाँधी। फिर वह जलती हुई एक चिता में से फूले हुए टेसू के समान खैर की लकड़ी के लाल अगारो को एक फूटे हुए मिट्टी के बरतन के टुकड़े (ठीकरे) में भर कर लाया और धधकते हुए अंगारों को गजसुकुमाल अनगार के सिर पर रख दिया। इसके बाद 'मुझे कोई देख न ले'—इस भय से चारो ओर इधर-उधर देखता हुआ वह वहाँ से भागा और जिस दिशा से आया था, उसी दिशा मे चला गया ॥२२॥

तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स सरीरयंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दुरहियासा। तएणं से गयसुकुमाले अणगारे सोमिलस्स माहणस्स मणसा वि अप्पदुस्समाणे तं उज्जलं जाव अहियासेइ। तएणं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स तं उज्जलं जाव अहियासे-माणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थज्झवसाणेणं तयावर-णिज्जाणं कम्माणं खएणं कम्मरयविकिरणकरं अपुव्व-करणं अणुप्पविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरणाण-दंसणे समुप्पण्णे तओ पच्छा सिद्धे जावप्पहीणे।

अर्थ—सोमिल ब्राह्मण द्वारा सिर पर अगारे रखे जाने से

गजसुकुमाल अनगार के शरीर मे महावेदना उत्पन्न हुई। वह वेदना अत्यन्त दु.खमयी, जाज्वल्यमान और असह्य थी। फिर भी गजसुकुमाल अनगार, सोमिल ब्राह्मण पर लेशमात्र भी द्वेष नही करते हुए समभावपूर्वक सहन करने लगे और शुभ परिणाम तया शुभ अध्यवसायों से तथा तदावरणीय (आत्मा के उन-उन गुणों को आच्छादित करने वाले) कर्मो के नाश से कर्म-विनाशक अपूर्वकरण में प्रवेश किया, जिससे उनको अनन्त (अन्त-रहित) अनुत्तर (प्रधान) निर्व्याघात (रुकावट रहित) निरावरण, कृत्स्न (सम्पूर्ण) प्रतिपूर्ण केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हुआ। तत्पश्चात् सकल कर्मो के क्षय हो जाने के कारण गजसुकुमाल अनगार कृतकृत्य वन कर 'सिद्ध' पद को प्राप्त हुए, जिससे वे लोकालोक के सभी पदार्थो के ज्ञान से 'बुद्ध' हुए। सभी कर्मो से छूट जाने से परिनिर्वृत (शीतलीभूत) हुए। शारीरिक और मानसिक सभी दुःखो से रहित होने के कारण 'सर्व दुःख-प्रहीण' हुए अर्थात् वे गजसुकुमाल अनगार मोक्ष को प्राप्त हो गये।

तत्थ णं अहासंणिहिएहिं देवेहिं सम्मं आराहिए त्ति कट्टु दिव्वेसुरभिगंधोदए वुट्ठे, दसद्धवण्णे कुसुमे णिवाडिए चेलुक्खेवे कए दिव्वे य गीयगंधव्वणिणाए कए यावि होत्था ॥ २३ ॥

उस समय वहाँ समीपवर्ती देवों ने—"इन गजसुकुमाल अनगार ने चारित्र का सम्यक् आराधन किया है"—ऐसा

विचार कर अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा दिव्य सुगन्धित अचित्त जल और पाँच वर्णो के अचित्त फूलों एवं वस्त्रो की वर्षा की और दिव्य मधर गायन एव वाद्यों की ध्वनि से आकाश को व्याप्त कर दिया ॥ २३ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते ण्हाए जाव विभूसिए हत्थिक्खंधवरगए सकोरंट-मल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामरांहि उद्धुवमाणीहिं महया-भड-चडगर-पहकर-वंदपरिविखत्ते बारवइं णयरीं मज्झंमज्झेणं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

अर्थ—गजसुकुमाल की दीक्षा के दूसरे दिन सूर्योदय हो जाने पर स्नानादि कर के यावत् सभी अलंकारो से अलकृत हो, हाथी पर बैठ कर, कोरण्ट के फूलो की माला से युक्त, छत्र सिर पर धराते हुए तथा दाएँ-बाएँ दोनों ओर श्वेत चामर डुलाते हुए, अनेक सुभटों के समूह से युक्त कृष्ण-वासुदेव द्वारिका नगरी के राजमार्ग से होते हुए भगवान् अरिष्टनेमि के समीप जाने के लिए चले ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छमाणे एक्कं पुरिसं पासइ जुण्णं जरा-जज्जरियदेहं जाव किलंतं महईमहालयाओ इट्टगरासीओ एगमेगं इट्टगं गहाय बहियारत्थापहाओ अंतोगिहं

अणुप्पविस्समाणं पासइ ।

द्वारिका नगरी के मध्य जाते हुए कृष्ण वासुदेव ने एक पुरुष को देखा। वह बहुत वृद्ध था। वृद्धावस्था के कारण उसकी देह जर्जरित हो गई थी। वह बहुत दुःखी था। उसके घर के बाहर, राजमार्ग पर ईंटों का एक विशाल ढेर था। वह वृद्ध उस विशाल ढेर मे से एक-एक ईंट उठा कर बाहर से अपने घर में ला कर रख रहा था।

तए णं से कण्हे वासुदेवे तस्स पुरिसस्स अणुकंपणट्ठाए हत्थिक्खंधवरगए चेव एगं इट्टगं गिण्हइ, गिण्हित्ता बहियारत्थापहाओ अंतोगिहं अणुप्पवेसेइ। तए णं कण्हेणं वासुदेवेणं एगाए इट्टगाए गहियाए समाणीए अणेगेहिं पुरिससएहिं से महालए इट्टगस्स रासी बहियारत्थापहाओ अंतोघरंसि अणुप्पवेसिए ॥ २४ ॥

उस दुःखी वृद्ध को इस प्रकार कार्य करते हुए देख कर कृष्ण-वासुदेव के मन में अनुकम्पा उत्पन्न हुई। उन्होंने हाथी पर बैठे बैठे ही अपने हाथ से एक ईंट उठा कर उसके घर मे रख दी। कृष्ण-वासुदेव के द्वारा एक ईंट उठाये जाने पर, अन्य सभी लोगों ने ईंटे उठा कर सारा ढेर उसके घर में पहुँचा दिया। इस प्रकार श्री कृष्ण के एक ईंट उठाने मात्र से उस वृद्ध पुरुष का बार-बार चक्कर काटने का कष्ट दूर हो गया।

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवए णयरीए

मज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठ-णेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव वंदइ णमं-सइ वंदित्ता णमंसित्ता गयसुकुमालं अणगारं अपासमाणे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--कहि णं भंते ! से मम सहोयरे भाया गयसुकु-माले अणगारे ? जण्णं अहं वंदामि णमंसामि । तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी--"साहिए णं कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं अप्पणो अट्ठे ।"

अर्थ-इसके बाद कृष्ण-वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य चलते हुए जहा भगवान् अरिष्टनेमि विराजते थे, वहा पहुँचे और भगवान् की वन्दन-नमस्कार किया । तत्पश्चात् अपने सहोदर लघुभ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल अनगार को वन्दन-नमस्कार करने के लिये इधर-उधर देखने लगे । जब उन्होने गजसुकुमाल अनगार को नही देखा, तब भगवान् से पूछा-"हे भगवन् ! मेरा सहोदर लघुभ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल अनगार कहा है ? मैं उनको वन्दन-नमस्कार करना चाहता हूँ ।" भगवान् ने फरमाया-"हे कृष्ण ! गजसुकुमाल अनगार ने जिस आत्म-अर्थ के लिए संयम-स्वीकार किया था, उसने वह आत्मार्थ सिद्ध कर लिया है ।"

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं

धर कर खड़े रहे।"

"हे कृष्ण ! उस समय वहाँ एक पुरुष आया और उसने गजसुकुमाल अनगार को ध्यानस्थ खड़ा देखा। देखते ही उसे वैर-भाव जागृत हुआ और वह क्रोध से आतुर हो कर तालाव से गीली मिट्टी लाया और गजसुकुमाल अनगार के सिर पर चारों ओर उस मिट्टी की पाल बांधी। फिर चिता मे जलते हुए खेर के अत्यन्त लाल अंगारों को एक फूटे हुए मिट्टी के बरतन में ले कर गजसुकुमाल अनगार के सिर पर डाल दिये, जिससे गजसुकुमाल अनगार को असह्य वेदना हुई, परन्तु फिर भी उनके हृदय में उस घातक पुरुष के प्रति थोड़ा भी द्वेष भाव नही आया। वे समभावपूर्वक उस भयंकर वेदना को सहन करते रहे और शुभ परिणाम एवं शुभ अध्यवसाय से केवलज्ञान प्राप्त कर मुक्त हो गए। इसलिये हे कृष्ण ! गजसुकुमाल अनगार ने अपना कार्य सिद्ध कर लिया।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी—"केसणं भंते ! से पुरिसे अप्पत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए, जे णं ममं सहोयरं कणीयसं भायरं गयसुकुमालं अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए ?" तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—"मा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स पओसमावज्जाहिं। एवं खलु कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स साहिज्जे दिण्णे" ॥ २६ ॥

यह सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमि से पूछा--"हे भगवन् ! मृत्यु को चाहने वाला लज्जा आदि से रहित वह पुरुष कौन है, जिसने मेरे सहोदर लघुभ्राता गजसुकुमाल अनगार का अकाल में ही प्राण-हरण कर लिया ?" भगवान् ने कहा--"हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष पर क्रोध मत करो, क्योंकि उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को मोक्ष प्राप्त करने मे सहायता दी है" ॥ २६ ॥

"कहण्णं भंते ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स णं साहिज्जे दिण्णे ?" तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी--"से णूणं कण्हा ! तुमं ममं पायवंदए हव्वमागच्छमाणे बारवईए णयरीए एगं पुरिसं पाससि जाव अणुप्पवेसिए। जहा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे। एवामेव कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभव-सयसहस्स-संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं बहुकम्मणिज्जरट्ठं साहिज्जे दिण्णे।"

अर्थ--यह सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् से पूछा--"हे भगवन् ! उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को कैसे सहायता दी ?" भगवान् ने कहा--"हे कृष्ण ! मेरे चरण-वन्दन करने के लिये आते हुए तुमने द्वारिका नगरी के राजमार्ग पर एक बहुत बड़े ईंटों के ढेर में से एक-एक ईंट उठा कर घर में रखते हुए, एक दीन-दुर्बल वृद्ध पुरुष को देखा। उस पर

अनुकम्पा कर के तुमने उस ढेर में से एक ईंट उठा कर उसके घर में रख दी, जिससे तुम्हारे साथ वाले सभी पुरुषों ने क्रम से उन सभी ईंटों को उठा कर उसके घर में रख दिया, जिससे उस वृद्ध पुरुष का दुःख दूर हो गया।"

"हे कृष्ण! जिस प्रकार तुमने उस वृद्ध पुरुष की सहायता की, उसी प्रकार उस पुरुष ने भी गजसुकुमाल के लाखों भवों में संचित किये हुए कर्मों की एकांत उदीरणा कर के उनका सम्पूर्ण क्षय करने मे बड़ी सहायता दी है।"

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी--से णं भंते! पुरिसे मए कहं जाणियव्वे? तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी--जे णं कण्हा! तुमं बारवईए णयरीए अणुप्पविसमाणं पासित्ता ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करिस्सइ। तए णं तुमं जाणिज्जासि एस णं से पुरिसे ॥ २७ ॥

यह सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् से फिर पूछा--"हे भगवन्! मै उस पुरुष को किस प्रकार जान सकूँगा?" भगवान् ने कहा--"हे कृष्ण! द्वारिका नगरी में प्रवेश करते हुए तुम्हें देखते ही जो पुरुष आयु की स्थिति के क्षय से वहीं पर खड़ा-खड़ा ही मृत्यु को प्राप्त हो जाय, उसी पुरुष को तुम जान लेना कि यह वही पुरुष है" ॥ २७ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ

इसे जान कर कृष्ण-वासुदेव न जाने मुझे किस कुमौत
मारेंगे। ऐसे विचार से भयभीत हो कर सोमिल ने भाग जा
का विचार किया। फिर उसने सोचा कि कृष्ण-वासुदेव
राजमार्ग से ही आवेंगे। इसलिए मुझे उचित है कि मैं गल
के रास्ते चल कर द्वारिका नगरी से निकल भागूं।' ऐस
विचार कर वह अपने घर से निकला और गली के रास
भागते हुए जाने लगा।

इधर कृष्ण-वासुदेव भी अपने सहोदर लघुभ्राता गजसुकु
माल अनगार की अकाल-मृत्यु के शोक से व्याकुल होने
कारण राजमार्ग छोड़ कर गली के रास्ते से ही आ रहे थे,
जिससे संयोगवश वह सोमिल ब्राह्मण, कृष्ण-वासुदेव के सामने
ही आ निकला ॥ २८ ॥

तए णं से सोमिले माहणे कण्हं वासुदेव सहसा पासित्ता भीए ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करेइ, करित्ता धरणितलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति सण्णिवडिए।

अर्थ--उस समय वह सोमिल ब्राह्मण, कृष्ण-वासुदेव को
सामने आते हुए देख कर बहुत भयभीत हुआ और जहाँ का
तहाँ खड़ा रह गया। आयु-क्षय हो जाने से वह खड़ा-खड़ा
ही मृत्यु को प्राप्त हो गया, जिससे उसका मृत शरीर धड़ाम
से धरती पर गिर पड़ा।

तए णं से कण्हे वासुदेवे सोमिलं माहणं पासइ पासित्ता एवं वयासी--"एस णं भो देवाणुप्पिया! से

सोमिले माहणे अपत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए। जेण ममं सहोयरे कणीयसे भायरे गयसुकुमाले अणगारे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए" त्ति कट्टु सोमिलं माहणं पाणेहिं कड्ढावेइ, कड्ढावित्ता तं भूमिं पाणिएणं अब्भोक्खावेइ, अब्भोक्खावित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवगए सयं गिहं अणुप्पविट्ठे।

जब कृष्ण-वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण को मृत्यु प्राप्त होते देखा, तब वे इस प्रकार बोले--"हे देवानुप्रियो ! यह वही अप्रार्थितप्रार्थक (जिसे कोई नही चाहता, उस मृत्यु को चाहने वाला) निर्लज्ज सोमिल ब्राह्मण है, जिसने मेरे सहोदर लघुभ्राता गजसुकुमाल अनगार को अकाल में ही काल का ग्रास बना डाला"--ऐसा कह कर उस मृत सोमिल के पैरों को रस्सी से बँधवा कर तथा चाण्डालों द्वारा घसीटवा कर नगर के बाहर फिकवा दिया और उस शव द्वारा स्पर्शित भूमि को पानी डलवा कर धुलवाया। फिर वहाँ से चल कर कृष्ण-वासुदेव अपने भवन मे पहुँचे।

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अट्ठमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥ २९ ॥

हे जम्बू ! सिद्ध गति को प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदसा नामक आठवें अंग के तीसरे वर्ग के

आठवें अध्ययन के उपरोक्त भाव फरमाये हैं ॥ २९ ॥

॥ इति आठवाँ अध्ययन समाप्त ॥

णवमस्स उक्खवओ, एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमए जाव विहरइ। तत्थ णं बारवईए णयरीए बलदेवे णामं राया होत्था, वण्णओ। तस्सणं बलदेवस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ। तएणं सा धारिणी सीहं सुमिणे जहा गोयमे, णवरं सुमुहे णामं कुमारे, पण्णासं कण्णाओ, पण्णासं दाओ, चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ वीसं वासाइं परियाओ, सेसं तं चेव जाव सेत्तुंजे सिद्धे। णिक्खेवओ ।९।

अर्थ---जम्बू स्वामी, सुधर्मा स्वामी से पूछते है--"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदसा सूत्र के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन के जो भाव कहे, वे मैंने आपसे सुने हैं। हे भगवन् ! श्रमण भगवन् महावीर स्वामी ने नौवें अध्ययन के क्या भाव कहे है ?"

जम्बू स्वामी के उपरोक्त प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय मे द्वारिका नाम की नगरी थी, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। उस नगरी में भगवान् अरिष्टनेमि, तीर्थंकर-परम्परा से विचरते हुए पधारे। उस द्वारिका नगरी में 'बलदेव' नाम के राजा थे। उनकी रानी का नाम 'धारिणी' था। वह अत्यन्त सुकोमल

और सुन्दर थी। एक समय सुकोमल शय्या पर सोयी हुई धारिणी रानी ने स्वप्न में सिंह देखा। स्वप्न देखते ही जागृत हो कर वह अपने पति के समीप आई और स्वप्न का वृत्तान्त सुनाया। गर्भ समय पूर्ण होने पर स्वप्न के अनुसार उनके यहाँ एक पुण्यशाली पुत्र का जन्म हुआ। इसके जन्म, बाल्यकाल आदि का वर्णन गौतमकुमार के समान है। उसका नाम 'सुमुख' रखा गया। यौवन अवस्था प्राप्त होने पर उस कुमार का पचास राजकन्याओं के साथ विवाह हुआ और विवाह में पचास-पचास करोड़ सौनेया आदि का दहेज मिला।

किसी समय भगवान् अरिष्टनेमि वहाँ पधारे। उनकी वाणी सुन कर सुमुख ने उनके पास दीक्षा अंगीकार की। चौदह पूर्वो का अध्ययन किया और बीस वर्ष पर्यन्त चारित्र-पर्याय का पालन किया। अन्त में शत्रुजय पर्वत पर संथारा कर के सिद्ध हुए।

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अतगडदसा नामक आठवें अंग के तीसरे वर्ग के नौवें अध्ययन का उपरोक्त भाव कहा है ॥ ९ ॥

एवं दुम्मुहे वि कूवदारए वि दोण्हं वि बलदेवे पिया, धारिणी माया ॥१०-११॥ दारुए वि एवं चेव णवरं वसुदेवे पिया, धारिणी माया ॥१२॥ एवं अणादिट्ठी वि, वसुदेवे पिया, धारिणी माया ॥१३॥ एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स

आठवें अध्ययन के उपरोक्त भाव फरमाये हैं ॥ २९ ॥

॥ इति आठवाँ अध्ययन समाप्त ॥

णवमस्स उक्खवओ, एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमए जाव विहरइ। तत्थ णं बारवईए णयरीए बलदेवे णामं राया होत्था, वण्णओ। तस्सणं बलदेवस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ। तएणं सा धारिणी सीहं सुमिणे जहा गोयमे, णवरं सुमुहे णामं कुमारे, पण्णासं कण्णाओ, पण्णासं दाओ, चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ वीसं वासाइं परियाओ, सेसं तं चेव जाव सेत्तुंजे सिद्धे। णिक्खेवओ ।९।

अर्थ---जम्बू स्वामी, सुधर्मा स्वामी से पूछते है--"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अतगडदसा सूत्र के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन के जो भाव कहे, वे मैंने आपसे सुने है। हे भगवन् ! श्रमण भगवन् महावीर स्वामी ने नौवें अध्ययन के क्या भाव कहे है ?"

जम्बू स्वामी के उपरोक्त प्रश्न के उत्तर में सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की नगरी थी, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। उस नगरी में भगवान् अरिष्टनेमि, तीर्थंकर-परम्परा से विचरते हुए पधारे। उस द्वारिका नगरी में 'बलदेव' नाम के राजा थे। उनकी रानी का नाम 'धारिणी' था। वह अत्यन्त सुकोमल

चतुर्थ वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। चउत्थस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—

जालि मयालि उवयालि, पुरिससेणे य वारिसेणे य ।
पज्जुण्ण संब अणिरुद्धे, सच्चणेमी य दढणेमी ॥१॥

अर्थ—जम्बू स्वामी, सुधर्मा स्वामी से पूछते है—"हे भगवन् ! सिद्ध-गति प्राप्त श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अतगडदसा नामक आठवें अंग के तीसरे वर्ग मे जो भाव कहे है, वे मैंने श्रवण किये । चौथे वर्ग का भगवान् ने क्या अर्थ कहा है, सो कृपा कर के कहिये ।"

उपरोक्त प्रश्न के उत्तर मे सुधर्मा स्वामी ने कहा—'हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने चतुर्थ वर्ग मे दस अध्ययन कहे है । उनके नाम इस प्रकार है—१ जालि २ मयालि ३ उवयालि ४ पुरुषसेन ५ वारिसेन ६ प्रद्युम्न ७ साम्ब ८ अनिरुद्ध ९ सत्यनेमि और १० दृढनेमि ॥ १ ॥'

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स

अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।

इसी प्रकार 'दुर्मुख' और 'कूपदारक'—इन दोनों कुमारों का भी वर्णन जानना चाहिये । इन दोनो के पिता का नाम 'बलदेव' और माता का नाम 'धारिणी' था । इनका सारा वर्णन सुमुख अनगार के समान ही है ॥ १०–११ ॥

'दारुक' कुमार का वर्णन भी सुमुख कुमार के समान ही है । अन्तर केवल इतना है कि इनके पिता का नाम 'वसुदेव' और माता का नाम 'धारिणी' था ॥ १२ ॥

इसी प्रकार 'अनादृष्टि' कुमार का भी वर्णन है । इनके पिता का नाम 'वसुदेव' और माता का नाम 'धारिणी' था। दीक्षा ले कर ये भी मोक्ष गये ॥ १३ ॥

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अतगडदसा नामक आठवे अग के तीसरे वर्ग में तेरह अध्ययनों का इस प्रकार अर्थ कहा है ।

॥ तृतीय वर्ग समाप्त ॥

वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता। पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते? एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था जहा पढमे। कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ॥ २॥

अर्थ–"हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने चतुर्थ वर्ग में दस अध्ययन कहे है, तो उनमें से प्रथम अध्ययन का क्या भाव कहा है?"

"हे जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की नगरी थी। जिसका वर्णन प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में किया जा चुका है। वहां कृष्ण-वासुदेव राज करते थे।"

तत्थ णं बारवईए णयरीए वसुदेवे राया धारिणी-देवी। वण्णओ। जहा गोयमो, णवरं जालिकुमारे पण्णासओ दाओ। बारसंगी, सोलस्स वासा परियाओ सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे। एवं मयालि उवयालि पुरिससेणे वारिसेणे य। एवं पज्जुण्णे वि णवरं कण्हे पिया रुप्पिणी माया। एवं संबे वि णवरं जंबवई माया। एवं अणिरुद्धे वि णवरं पज्जुण्णे पिया, वेदब्भी माया। एवं सच्चणेमी, णवरं समुद्दविजए पिया, सिवा माया। एवं दढणेमी वि। सव्वे एगगमा।

॥ चउत्थस्स वग्गस्स णिक्खेवओ॥ १०॥

अर्थ–उस द्वारिका नगरी में वसुदेव राजा निवास करते थे। उनकी रानी का नाम धारिणी था। वह अत्यन्त सुकुमाल सुन्दर एवं सुशीला थी। एक समय सुकोमल शय्या पर सोती हुई उस धारिणी रानी ने सिंह का स्वप्न देखा और स्वप्न का वृत्तान्त अपने पतिदेव को सुनाया। उसके बाद गौतमकुमार के समान एक तेजस्वी पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम 'जालिकुमार' रखा गया। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुआ, तब उसका विवाह पचास कन्याओं के साथ किया गया और उन्हें पचास-पचास करोड़ सोनैया आदि दहेज मिला।

एक समय भगवान् अरिष्टनेमि वहां पधारे। उनकी वाणी सुन कर जालिकुमार को वैराग्य उत्पन्न हो गया। माता पिता की आज्ञा ले कर उन्होंने भगवान् के पास दीक्षा अंगीकार की। उन्होंने बारह अंगों का अध्ययन किया और सोलह वर्ष पर्यन्त दीक्षा-पर्याय पाली। फिर गौतम अनगार के समान इन्होंने भी शत्रुंजय पर्वत पर एक मास का संथारा किया और सर्व कर्मों से मुक्त हो कर सिद्ध हुए॥ १॥

इसी प्रकार मयालि, उवयालि, पुरुषसेन और वारिसेन का चरित्र भी जानना चाहिए। ये सभी वासुदेव के पुत्र और धारिणी के अंगजात थे॥ ५॥

इसी प्रकार प्रद्युम्न का चरित्र भी जानना चाहिए। इनके पिता का नाम 'कृष्ण' और माता का नाम 'रुक्मिणी' था।६।

इसी प्रकार 'शाम्वकुमार' का वर्णन भी जानना चाहिए। इनके पिता का नाम 'कृष्ण' और माता का नाम 'जाम्ब्रवती' था ॥ ७ ॥

इसी प्रकार 'अनिरुद्ध कुमार' का वर्णन भी जानना चाहिए। इनके पिता का नाम 'प्रद्युम्न' और माता का नाम 'वैदर्भी' था।

इसी प्रकार 'सत्यनेमि' और 'दृढनेमि' इन दोनो कुमारों का वर्णन जानना चाहिए। इन दोनों के पिता का नाम 'समुद्रविजय' और माता का नाम 'शिवादेवी' था ॥९-१०॥

सभी अध्ययनों का वर्णन एक समान है।

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने चतुर्थ वर्ग के भाव इस प्रकार कहे है।

॥ चतुर्थ वर्ग समाप्त ॥

पाँचवाँ वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा—

पउमावई य गोरी, गंधारी लक्खणा सुसीमा य।
जंबुवई सच्चभामा, रुप्पिणी मूलसिरी मूलदत्ता य ॥

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता। पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

अर्थ—जम्बू स्वामी, श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगड सूत्र के चतुर्थ वर्ग का जो अर्थ कहा, वह मैंने सुना। हे भगवन् ! इसके बाद पाँचवें वर्ग में क्या भाव कहे है ?"

उपर्युक्त प्रश्न के उत्तर में श्री सुधर्मा स्वामी कहते है—"हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने पाँचवे वर्ग में दस अध्ययन कहे है। वे इस प्रकार हैं—

१ पद्मावती २ गौरी ३ गांधारी ४ लक्ष्मणा ५ सुसीमा ६ जांबवती ७ सत्यभामा ८ रुक्मिणी ९ मूलश्री और १० मूलदत्ता।

श्री जम्बू स्वामी पूछते हैं–"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने पाँचवें वर्ग मे दस अध्ययन कहे है, तो उनमें से पहले अध्ययन का क्या भाव है ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था, जहा पढमे, जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ । तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई णामं देवी होत्था, वण्णओ ।

अर्थ–श्री सुधर्मा स्वामी, जम्बू स्वामी से कहते है--"हे जम्बू ! उस काल उस समय मे द्वारिका नाम की नगरी थी। वहाँ कृष्ण-वासुदेव राज करते थे। उनकी रानी का नाम 'पद्मावती' था। वह अत्यन्त सुकुमार और सुरूप थी।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे जाव विहरइ। कण्हे णिग्गए जाव पज्जुवासइ। तएणं सा पउमावई देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठ० जहा देवई जाव पज्जुवासइ। तएणं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई देवीए जाव धम्मकहा। परिसा पडिगया।

उस काल उस समय में भगवान् अरिष्टनेमि, तीर्थंकर परंपरा से विचरते हुए वहाँ पधारे। भगवान् का आगमन सुन कर कृष्ण-वासुदेव उनके दर्शन के लिए गये यावत् पर्युपासना करने लगे। भगवान् का आगमन सुन कर पद्मावती रानी भी अत्यंत

हृष्ट-तुष्ट--प्रसन्न हुई। वह भी देवकी के समान धर्म-रथ पर चढ़ कर भगवान् के दर्शन करने के लिए गई। भगवान् अरिष्ट-नेमि ने कृष्ण-वासुदेव, पद्मावती रानी और परिषद् को धर्म-कथा कही। धर्म-कथा सुन कर परिषद् अपने-अपने घर लौट गई।

तए णं कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--इमीसे णं भंते ! बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण-विच्छिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए किंमूलए विणासे भविस्सइ ? कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्ह-वासुदेवं एवं वयासी--एवं खलु कण्हा ! इमीसे बार-वईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण-विच्छिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवा-यणमूलए विणासे भविस्सइ ॥ २ ॥

इसके बाद कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमि को वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार पूछा--"हे भगवन् ! बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश किस कारण से होगा ?"

भगवान् अरिष्टनेमि ने कहा—"हे कृष्ण ! बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश सुरा—मदिरा, अग्नि और द्वीपायन ऋषि के कारण होगा।"

तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा अयमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे—धण्णा णं ते जालि-मयालि-उवयालि-पुरिस-सेण-वारिसेण-पज्जुण्ण-संब-अणिरुद्ध-दढणेमि-सच्चणेमिप्पभिइओ कुमारा, जे णं चिच्चा हिरण्णं जाव परिभाइत्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स, अंतियं मुंडा जाव पव्वइया, अहण्णं अधण्णे अकयपुण्णे रज्जे य जाव अंतेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए णो संचाएमि अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए।

अर्थ—भगवान् अरिष्टनेमि के मुख से द्वारिका नगरी के विनाश का कारण जान कर कृष्ण वासुदेव के हृदय में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि वे जालि, मयालि, उवयालि, पुरुषसेन, वारिसेन, प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, दृढ़नेमि और सच्चनेमि आदि धन्य है कि जिन्होंने अपनी सम्पत्ति, स्वजन और याचकों को दे कर भगवान् अरिष्टनेमि के पास मुण्डित हो कर प्रव्रजित हो गये। मैं अधन्य हूँ, अकृत-पुण्य हूँ, जिससे मैं राज्य में, अन्तःपुर में और मनुष्य सम्बन्धी काम-भोगों में ही फँसा हुआ हूँ। इनसे विमुक्त हो कर मै भगवान् अरिष्टनेमि के समीप-दीक्षा नहीं ले सकता।

"कण्हाइ !" अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—से णूणं कण्हा ! तव अयं अज्झत्थिए समु-

पण्णे धण्णा णं ते जालि जाव पव्वइत्तए ? से णूणं कण्हा ! अयमट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ॥ ३ ॥

भगवान् अरिष्टनेमि ने अपने ज्ञान से कृष्ण-वासुदेव के हृदय मे आये हुए विचारों को जान कर आर्त्तध्यान करते कृष्ण-वासुदेव से इस प्रकार कहा—"हे कृष्ण ! तुम्हारे मन मे इस प्रकार भावना हो रही है कि वे जालि, मयालि आदि कुमार धन्य हैं, जिन्होंने अपना धन-वैभव, स्वजन और याचकों को दे कर अनगार हो गये है। मै अधन्य हूँ, अकृतपुण्य हूँ, जो राज्य, अन्तःपुर और मनुष्य सम्बन्धी काम-भोगो में ही गृद्ध हूँ। मै भगवान् अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या नहीं ले सकता।"

"हे कृष्ण ! क्या यह बात सत्य है ?"

कृष्ण ने उत्तर दिया—"हां भगवन् ! आपने जो कहा, वह सभी सत्य है। आप सर्वज्ञ है। आपसे कोई बात छिपी हुई नही है" ॥ ३ ॥

"तं णो खलु कण्हा ! एवं भूयं वा भव्वं वा भविस्सइ वा जण्णं वासुदेवा चइत्ता हिरण्णं जाव पव्वइस्संति।" "से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—ण एवं भूयं वा जाव पव्वइस्संति ?" "कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु कण्हा ! सव्वे वि य णं वासुदेवा पुव्वभवे णियाणकडा, से एएणट्ठेणं कण्हा एवं वुच्चइ—ण एवं भूयं जाव पव्वइस्संति" ।४।

अर्थ--"हे कृष्ण ! ऐसा कभी हुआ नही, होता नही और होगा भी नहीं कि वासुदेव अपने भव में संपत्ति छोड़कर प्रव्रजित हो जाय। नहीं, वासुदेव दीक्षा लेते ही नही, कभी ली नहीं और भविष्य में लेंगे भी नहीं।"

यह सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने पूछा--"हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?"

भगवान् ने कहा--"हे कृष्ण ! सभी वासुदेव पूर्व-भव में निदानकृत (नियाणा करने वाले) होते है। इसलिए मै ऐसा कहता हूँ कि ऐसा कभी हुआ नही, होता नही और होगा भी नही कि वासुदेव अपनी संपत्ति को छोड़ कर दीक्षा ले ॥४॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी--अहं णं भंते ! इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिस्सामि ? कहिं उववज्जिस्सामि ?

अर्थ--यह सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमि से पूछा--"हे भगवन् ! मै यहाँ से काल के समय काल कर के कहाँ जाऊँगा, कहाँ उत्पन्न होऊँगा ?"

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-"एवं खलु कण्हा ! तुमं बारवईए णयरीए सुरग्गिदीवायण-कोव-णिद्दड्ढाए अम्मापिइणियगविप्पहूणे रामेण-बलदेवेणसद्धिं दाहिणवेयालिं अभिमुहे जोहिट्ठिल्लपामोक्खाणं पंचण्हं पंडवाणं पंडुरायपुत्ताणं पासं पंडुमहुरं

संपत्थिए कोसंबवणकाणणे णग्गोहवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टए पीयवत्थपच्छाइयसरीरे जरकुमारेणं तिक्खेणं कोदंड-विप्पमुक्केणं इसुणा वामे पाए विद्धे समाणे कालमासे कालं किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए जाव उववज्जिहिसि" ॥ ५ ॥

भगवान् ने कहा--"हे कृष्ण ! सुरा, अग्नि और द्वीपायन ऋषि के कोप के कारण इस द्वारिका नगरी का नाश हो जाने पर और अपने माता-पिता तथा स्वजनों से विहीन हो जाने पर तुम राम-बलदेव के साथ दक्षिण समुद्र के किनारे पाण्डु राजा के पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव इन पाँचों पाण्डव के समीप पाण्डु-मथुरा की ओर जाओगे। उधर जाते हुए विश्राम लेने के लिए कोशाम्ब वृक्ष के वन में एक अत्यंत विशाल वट-वृक्ष के नीचे, पृथ्वी शिलापट्ट पर पीताम्बर से अपनी देह को ढ़क कर सो जाओगे। उस समय मृग की आशंका से जराकुमार द्वारा चलाया हुआ तीक्ष्ण वाण तुम्हारे बाएँ पैर मे लगेगा। इस प्रकार वाण से विद्ध हो कर तुम काल के समय काल कर के वालुकाप्रभा नामक तीसरी पृथ्वी में उत्पन्न होओगे ॥ ५ ॥

तए णं कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म ओहय जाव झियाइ।

अर्थ--भगवान् के मुख मे अपने आगामी भव की बात

सुन कर कृष्ण-वासुदेव आर्त्तध्यान करने लगे।

"कण्हाइ !" अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! ओहय जाव झियाहि। एवं खलु तुमं देवाणुप्पिया ! तच्चाओ पुढवीओ उज्जलियाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबू-द्दीवे दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए पुंडेसु जणवएसु सयदुवारे णयरे बारसमे अममे णामं अरहा भविस्ससि। तत्थ तुमं बहूइं वासाइं केवलपरियायं पाउणित्ता सिज्झिहिसि" ॥ ६ ॥

तब भगवान् अरिष्टनेमि ने कहा—'हे कृष्ण ! तुम इस प्रकार आर्त्तध्यान मत करो। तुम तीसरी पृथ्वी से निकल कर आगामी उत्सर्पिणी काल मे इसी जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र के पुड्रजनपद के शतद्वार नगर मे 'अमम' नाम के बारहवें तीर्थंकर बनोगे। वहाँ बहुत वर्षों तक केवल-पर्याय का पालन कर सिद्ध पद प्राप्त करोगे" ॥ ६ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ० अप्फोडेइ, अप्फोडित्ता वग्गइ, वग्गित्ता तिवलिं छिंदइ, छिंदित्ता सीहणायं करेइ, करित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता तमेव अभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरुहइ दुरुहित्ता जेणेव बारवई णयरी जेणेव सए गिहे तेणेव

उवागए । अभिसेय हत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सए सिहासणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ णिसीइत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी--

अर्थ - भगवान् अरिष्टनेमि के मुखारविन्द से अपने भविष्य का वृत्तान्त सुन कर कृष्ण-वासुदेव हृष्ट-तुष्ट हृदय से अपनी भुजा ठोकने लगे और हर्षावेश मे जोर-जोर से शब्द करने लगे। उन्होने तीन चरण पीछे हट कर सिहनाद किया। फिर भगवान् को वन्दन-नमस्कार कर के अभिषेक हस्ति-रत्न पर चढे और द्वारिका नगरी के मध्य होते हुए अपने भवन में पहुँचे। हाथी से उतर कर जहाँ बाहरी उपस्थानशाला थी और जहाँ अपना सिहासन था, वहाँ गये। वे सिहासन पर पूर्वाभिमुख बैठे और कौटुम्बिक पुरुषो (राजसेवको) को बुलाकर इस प्रकार बोले--

गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए सिंघाडग जाव उग्घोसेमाणा एवं वयह--"एवं खलु देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए दुवालसजोयण-आयामाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवायणमूले विणासे भविस्सइ तं जो णं देवाणुप्पिया ! इच्छइ बारवईए णयरीए राया वा जुवराया वा ईसरे तलवरे

माडंबिए कोडुंबिए इब्भे सेट्ठी वा देवी वा कुमारो वा कुमारी वा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वइत्तए, तं णं कण्हे वासुदेवे विसज्जइ पच्छाउरस्स वि य से अहापवित्तं वित्तं अणुजाणइ, महया इड्ढिसक्कार-समुदएण य से णिक्खमणं करेइ," दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह घोसइत्ता मम एयं आणत्तियं पच्चप्पि-णह।" तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ।७।

"हे देवानुप्रियो ! इस द्वारिका नगरी के चतुष्पथ आदि सभी स्थानों पर मेरी इस आज्ञा को उद्घोषित करो कि—"हे देवानुप्रियो ! बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश, मदिरा अग्नि और द्वीपायन ऋषि के द्वारा होगा। इसलिए द्वारिका नगरी का कोई भी व्यक्ति, चाहे वह राजा हो, युवराज हो, ईश्वर (स्वामी या मन्त्री) हो, तलवर (राजा का प्रिय अथवा राजा के समान) हो, माडम्बिक (छोटे गाव का स्वामी) हो, कौटुम्बिक (दो-तीन कुटुम्बों का स्वामी) हो, इभ्य-सेठ हो, रानी हो, कुमार हो, कुमारी हो और कोई भी हो, जो भगवान् अरिष्टनेमि के समीप दीक्षा लेना चाहें, उन्हें कृष्ण-वासुदेव दीक्षा लेने की आज्ञा देते है। दीक्षा लेने वाले के पीछे जो कोई बाल, वृद्ध व रोगी होगे, उनका पालन-पोषण कृष्ण-वासुदेव करेंगे और दीक्षा लेने वालों का दीक्षा-महोत्सव भी बड़े समारोह के साथ कृष्ण-वासुदेव अपनी ओर

से ही करेंगे।" इस प्रकार दो-तीन बार घोषणा कर के मुझे सूचित करो।

कृष्ण-वासुदेव की आज्ञानुसार कौटुम्बिक (राजसेवक) पुरुषों ने उद्घोषणा कर के कृष्ण-वासुदेव के पास आ कर निवेदन किया ॥ ७ ॥

तए णं सा पउमावई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–

अर्थ–भगवान् अरिष्टनेमि से धर्म सुन कर और हृदय में धारण कर के पद्मावती रानी हृष्ट तुष्ट हुई, यावत् भावपूर्ण हृदय से भगवान् को नमस्कार कर इस प्रकार बोली—

सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं से जहेयं तुब्भे वयह। जं णवरं देवाणुप्पिया ! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुण्डा जाव पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ॥ ८ ॥

"हे भगवन् ! आपका उपदेश यथार्थ है। जैसा आप कहते है, वह तत्त्व वैसा ही है। निर्ग्रंथ-प्रवचन पर मेरी श्रद्धा है। मै कृष्ण-वासुदेव से पूछ कर आपके समीप दीक्षा लेना चाहती हूँ।" भगवान् ने कहा—"हे देवानुप्रिये ! जिस प्रकार

तुम्हारी आत्मा को सुख हो, वैसा करो। धर्म-कार्य मे प्रमाद मत करो ॥ ८ ॥

तए णं सा पउमावई देवी धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिए !

अर्थ--इसके बाद पद्मावती रानी धार्मिक रथ पर चढ कर द्वारिका नगरी की ओर लौटी और अपने भवन के पास आ कर धार्मिक रथ से नीचे उतरी, फिर जहां कृष्ण-वासुदेव थे वहां गई। उनके सामने हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोली-"हे देवानुप्रिय ! मै भगवान् अरिष्टनेमि से दीक्षा अगीकार करना चाहती हूँ। इसलिए आप मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा प्रदान करे।"

पद्मावती रानी की उपर्युक्त बात सुन कर कृष्ण-वासुदेव ने कहा-"हे देवानुप्रिये ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो। वैसा कार्य करो।"

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! पउमावई देवीए महत्थं णिक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह, उवट्ठवित्ता एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबिया जाव पच्चप्पिणंति ॥ ९ ॥

इसके बाद कृष्ण-वासुदेव ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा–"हे देवानुप्रियों! पद्मावती देवी के लिए शीघ्र ही दीक्षा महोत्सव की विशाल तैयारी करो और तैयारी हो जाने पर मुझे सूचना दो।"

कृष्ण-वासुदेव की उपर्युक्त आज्ञा पा कर सेवक पुरुषों ने दीक्षा-महोत्सव सम्बन्धी व्यवस्था कर के उसकी सूचना कृष्ण-वासुदेव को दी ॥ ९ ॥

तए णं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पट्टयं दुरूहइ, दुरूहित्ता अट्ठसएणं सोवण्णकलसेणं जाव णिक्खमणाभिसएणं अभिसिंचइ अभिसिंचित्ता सव्वालंकार-विभूसियं करेइ, करित्ता पुरिससहस्सवाहिणीं सिवियं दुरूहावेइ, दुरूहावित्ता बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिगच्छइ, णिगच्छित्ता जेणेव रेवयए पव्वए जेणेव सहस्सम्ववणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीयं ठवेइ, पउमावई देवी सीयाओ पच्चोरुहइ।

अर्थ––कृष्ण-वासुदेव ने पद्मावती देवी को पाट पर

बिठा कर एक सौ आठ स्वर्ण कलशों से स्नान करवाया यावत् दीक्षा का अभिषेक किया और सभी अलंकारों से अलंकृत कर के हजार पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली शिविका (पालकी) पर उसे बिठाया और द्वारिका नगरी के मध्य होते हुए रैवतक पर्वत के सहस्राम्र वन में आये और पालकी नीचे रखी। पद्मावती देवी शिविका से नीचे उतरी।

तए णं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पुरओ कट्टु जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-"एस णं भंते ! मम अग्गमहिसी पउमावई णामं देवी, इट्ठा कंता पिया मणुण्णा मणामा अभिरामा जीवियऊसासा हिययाणंदजणिया उंबरपुप्फंविवदुल्लहा सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए ? तण्णं अहं देवाणुप्पियाणं सिस्सिणीभिक्खं दलयामि। पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणी भिक्खं। अहासुहं।

कृष्ण-वासुदेव, पद्मावती देवी को आगे कर के भगवान् अरिष्टनेमि के समीप आये और तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण कर के वन्दन-नमस्कार किया और इस प्रकार बोले-"हे भगवन् ! यह पद्मावती देवी मेरी पटरानी है। यह मेरे लिए इष्ट है, कान्त है, प्रिय है, मनोज्ञ है, मनाम (मन के अनुकूल

कार्य करने वाली) है, अभिराम (सुन्दर) है। हे भगवन् ! यह मेरे जीवन में श्वासोच्छ्वास के समान प्रिय है और मेरे हृदय को आनन्दित करने वाली है। इस प्रकार का स्त्री-रत्न उदुम्वर (गूलर) के फूल के समान सुनने के लिए भी दुर्लभ है, तव देखने की तो बात ही क्या है? हे भगवन् ! ऐसी पद्मावती देवी को मै आपको शिष्या रूप भिक्षा देता हूँ। आप कृपा कर इस शिष्या रूप भिक्षा को स्वीकार करें।" कृष्ण-वासुदेव की प्रार्थना सुन कर भगवन् ने कहा–"हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार सुख हो, वैसा करो।"

तए णं सा पउमावई देवी उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरणालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–आलित्ते णं भंते ! जाव धम्ममाइक्खियं ॥ १० ॥

इसके वाद पद्मावती देवी ने ईशान-कोण में जा कर अपने हाथों से अपने शरीर पर के सभी आभूषण उतार दिये और अपने केशों का स्वयमेव पञ्चमुष्टिक लुञ्चन कर के भगवान् अरिष्टनेमि के समीप आई और उन्हे वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार वोली–"हे भगवन् ! यह ससार जन्म, जरा और मरण आदि दुःख रूपी अग्नि से प्रज्वलित हो रहा है।

अत: इस दु ख-समूह से छूटकारा पाने के लिए आपसे दीक्षा अगीकार करना चाहती हूँ। अत: आप कृपा कर के मुझे प्रव्रजित कीजिये यावत् चारित्र-धर्म सुनाइये" ॥ १० ॥

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव-मुंडावेइ, सयमेव जक्खिणीए अज्जाए सिस्सिणीं दलयइ। तए णं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं देविं सयं पव्वावेइ जाव संजमियव्वं। तए णं सा पउमावई जाव संजमइ। तए णं सा पउमावई देवी अज्जा जाया, ईरियासमिया जाव गुत्तबम्भयारिणी ॥

अर्थ—भगवान् अरिष्टनेमि ने पद्मावती देवी को स्वयमेव प्रव्रजित और मुण्डित कर के यक्षिणी आर्या को शिष्या के रूप मे दे दी। यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को प्रव्रजित किया और सयम-क्रिया में सावधान रहने की शिक्षा देते हुए कहा— "हे पद्मावती ! तुम संयम मे सदा सावधान रहना।" पद्मावती भी यक्षिणी आर्या के कथनानुसार सयम में यत्न करने लगी और ईर्यासमिति आदि पाँचों समिति से युक्त हो कर ब्रह्मचारिणी बन गई ॥ ११ ॥

तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जइत्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विविहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावे-

माणा विहरइ । तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडि-पुण्णाइं वीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउजित्ता मासि-याए संलेहणाए अप्पाणं झोसेइ, झोसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाइं छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरई णग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ चरमेहिं उस्सासणिस्सासेहिं सिद्धा ॥ १२ ॥

पद्मावती आर्या ने यक्षिणी आर्या के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और साथ ही साथ उपवास, बेला, तेला, चोला, पचोला, पन्द्रह-पन्द्रह दिन और महीने-महीने तक की विविध प्रकार की तपस्या करती हुई विचरने लगी। पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। अन्त में एक मास की संलेखना की और साठ भक्त अनशन कर के जिस कार्य (मोक्ष प्राप्ति) के लिए संयम लिया था, उसकी आराधना कर के अन्तिम श्वास के बाद सिद्ध पद को प्राप्त किया ॥ १२ ॥

॥ पंचम वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

२ उक्खेवओ य अज्झयणस्स । तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी, रेवयए पव्वए, उज्जाणे णंदण-वणे । तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे वासुदेवे राया होत्था। तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स गोरी देवी वण्णओ,

अतः इस दु.ख-समूह से छूटकारा पाने के लिए आपसे दीक्षा अगीकार करना चाहती हूँ। अतः आप कृपा कर के मुझे प्रव्रजित कीजिये यावत् चारित्र-धर्म सुनाइये" ॥ १० ॥

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव-मुंडावेइ, सयमेव जक्खिणीए अज्जाए सिस्सिणीं दलयइ। तए णं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं देविं सयं पव्वावेइ जाव संजमियव्वं। तए णं सा पउमावई जाव संजमइ। तए णं सा पउमावई देवी अज्जा जाया, ईरियासमिया जाव गुत्तबम्भयारिणी ॥

अर्थ–भगवान् अरिष्टनेमि ने पद्मावती देवी को स्वयमेव प्रव्रजित और मुण्डित कर के यक्षिणी आर्या को शिष्या के रूप मे दे दी। यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को प्रव्रजित किया और सयम-क्रिया में सावधान रहने की शिक्षा देते हुए कहा–"हे पद्मावती ! तुम सयम में सदा सावधान रहना।" पद्मावती भी यक्षिणी आर्या के कथनानुसार सयम में यत्न करने लगी और ईर्यासमिति आदि पाँचों समिति से युक्त हो कर ब्रह्मचारिणी बन गई ॥ ११ ॥

तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जइत्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विविहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावे-

माणा विहरइ। तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडि-पुण्गाइं वीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउजित्ता मासि-याए संलेहणाए अप्पाणं झोसेइ, झोसित्ता सट्ठि भत्ताइं अणसणाइं छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरई णग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ चरमेहिं उस्सासणिस्सासेहिं सिद्धा ॥ १२ ॥

पद्मावती आर्या ने यक्षिणी आर्या के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और साथ ही साथ उपवास, बेला, तेला, चोला, पचोला, पन्द्रह-पन्द्रह दिन और महीने-महीने तक की विविध प्रकार की तपस्या करती हुई विचरने लगी। पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। अन्त में एक मास की सलेखना की और साठ भक्त अनशन कर के जिस कार्य (मोक्ष प्राप्ति) के लिए संयम लिया था, उसकी आराधना कर के अन्तिम श्वास के बाद सिद्ध पद को प्राप्त किया ॥ १२ ॥

॥ पंचम वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

२ उक्खेवओ य अज्झयणस्स। तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी, रेवयए पव्वए, उज्जाणे णंदण-वणे। तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे वासुदेवे राया होत्था। तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स गोरी देवी वण्णओ,

अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे, कण्हे णिग्गए, गोरी जहा पउमावई तहा णिग्गया, धम्मकहा, परिसा पडिगया, कण्हे वि पडिगए। तए णं सा गोरी जहा पउमावई तहा णिक्खंता जाव सिद्धा।

अर्थ---श्री जम्बू स्वामी, श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते है-"हे भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने प्रथम अध्ययन में जो भाव कहे, वे मैंने आपके मुखारविन्द से सुने। इसके बाद भगवान् ने दूसरे अध्ययन मे क्या भाव कहे है, सो कृपा कर कहिये।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा-"हे जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की नगरी थी। उस नगरी के समीप रैवतक नामक पर्वत था। उस पर्वत पर नन्दन वन नामक एक मनोहर तथा विशाल उद्यान था। द्वारिका नगरी में कृष्ण-वासुदेव राज करते थे। उनके "गौरी" नाम की रानी थी।

एक समय उस नन्दन वन उद्यान में भगवान् अरिष्टनेमि पधारे। कृष्ण-वासुदेव भगवान् के दर्शन करने के लिए गये। परिषद् भी गई और गौरी रानी भी पद्मावती रानी के समान भगवान् के दर्शन करने के लिए गई। भगवान् ने धर्म-कथा कही। धर्म-कथा सुन कर परिषद् अपने-अपने घर लौट गई और कृष्ण-वासुदेव भी अपने भवन में लौट गये। इसके बाद गौरी देवी, पद्मावती रानी के समान प्रव्रजित हुई यावत् सिद्ध हो गई।

एवं ३ गंधारी ४ लक्खणा ५ सुसीमा ६ जम्बुवई ७ सच्चभामा ८ रुप्पिणी। अट्ठ वि पउमावई सरिसयाओ। अट्ठ अज्झयणा ॥ १ ॥

इसी प्रकार गान्धारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती, सत्यभामा और रुक्मिणी का वर्णन समान रूप से जानना चाहिए। पद्मावती आदि आठों रानियाँ एक समान प्रव्रजित हो कर सिद्ध हो गई। ये आठों कृष्ण वासुदेव की पटरानियाँ थी।

इस प्रकार ये आठ अध्ययन समाप्त हुए।

उक्खेवओ य णवमस्स। तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए, रेवयए पव्वए, णंदणवणे उज्जाणे, कण्हे राया। तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हस्स वासुदेवस्स पुत्तए जंबवईए देवीए अत्तए संबे णामं कुमारे होत्था अहीण०। तस्स णं संबस्स कुमारस्स मूलसिरि णामं भारिया होत्था, वण्णओ। अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे। कण्हे णिग्गए। मूलसिरि वि णिग्गया, जहा पउमावई। णवरं देवाणुप्पिया! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि जाव सिद्धा। एवं मूलदत्ता वि।

॥ पंचमो वग्गो समत्तो ॥

अर्थ--श्री जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने आठवे अध्ययन के जो भाव कहे, वे मैंने आपके मुखारविन्द से सुने। इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने नौवें अध्ययन के क्या भाव कहे हैं, सो कृपा करके कहिये।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा--हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारिका नाम की नगरी थी। उस नगरी के समीप रैवतक पर्वत था। वहाँ पर नन्दन वन उद्यान था। उस नगरी में कृष्ण-वासुदेव राज करते थे। कृष्ण-वासुदेव के पुत्र एवं जाम्बवती देवी के आत्मज 'शाम्ब' नामक पुत्र थे, जो सर्वांग सुन्दर थे। शाम्बकुमार की रानी का नाम 'मूलश्री' था, जो अत्यन्त सुन्दरी एव कोमलांगी थी।

एक समय भगवान् अरिष्टनेमि वहां पधारे। कृष्ण-वासुदेव उनके दर्शन करने गये। मूलश्री भी पद्मावती के समान दर्शन करने गई। भगवान् ने धर्म-कथा कही। धर्म-कथा सुन कर परिषद् अपने-अपने घर लौट गई। कृष्ण-वासुदेव भी भगवान् को वन्दन-नमस्कार कर लौट गये। इसके बाद मूलश्री ने भगवान् से कहा कि--"हे भगवन् ! मैं+ कृष्ण-वासुदेव की आज्ञा ले कर आपके पास दीक्षा लेना चाहती हूँ।" भगवान् ने कहा--"हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हे सुख हो,

+ शाम्बकुमार ने पहले ही दीक्षा ले ली थी। इसलिये मूलश्री ने अपने श्वशुर कृष्ण-वासुदेव की आज्ञा ले कर दीक्षा ली।

वैसा करो।"

इसके बाद मूलश्री ने पद्मावती के समान दीक्षा ले कर तप-संयम की आराधना कर के सिद्ध पद को प्राप्त किया।

मूलश्री के समान 'मूलदत्ता' का भी सारा वृत्तान्त जानना चाहिये। यह शाम्बकुमार की दूसरी रानी थी।

पाँचवें वर्ग का ९ और १० अध्ययन पूर्ण हुए

॥ पाँचवाँ वर्ग सम्पूर्ण ॥
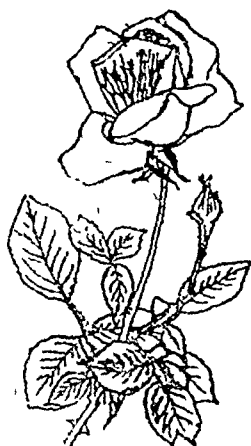
छठा वर्ग

जइ णं भंते ! छट्ठमस्स उक्खेवओ । णवरं सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा--

मकाई किंकमे चेव, मोग्गरपाणी य कासवे ।
खेमए धितिधरे चेव, केलासे हरिचंदणे ॥ १ ॥
वारत्त-सुदंसण-पुण्णभद्द, सुमणभद्द-सुपइट्ठे मेहे ।
अइमुत्ते य अलक्खे, अज्झयणाणं तु सोलसयं ॥२॥

अर्थ--श्री जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन् ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने पाचवे वर्ग के जो भाव कहे, वे मैने आपसे सुने । इसके बाद श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग के क्या भाव कहे है, सो कृपा कर कहिये ।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग मे सोलह अध्ययन कहे है । वे इस प्रकार है--

१ मकाई २ किंकम ३ मुद्गरपाणि ४ काश्यप ५ क्षेमक ६ धृतिधर ७ कैलाश ८ हरिचन्दन ९ वारत्त १० सुदर्शन ११ पूर्णभद्र १२ सुमनोभद्र १३ सुप्रतिष्ठ १४ मेघ १५ अतिमुक्त और १६ अलक्ष्य । ये सोलह अध्ययन है ।

जइ णं भंते ! सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने इन सोलह अध्ययनों में से प्रथम अध्ययन में क्या भाव कहे हैं ?"

इसके उत्तर में श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा--

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया। तत्थ णं मकाई णामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए।

अर्थ-"हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। वहाँ गुणशीलक नामक चैत्य (उद्यान) था। उस नगर में श्रेणिक राजा राज करते थे। उस नगर मे मकाई नाम का एक गाथापति रहता था, जो अत्यन्त समृद्ध और दूसरो से अपराभूत था।"

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव गुणसिलए जाव विहरइ। परिसा णिग्गया। तए णं से मकाई गाहावई इमीसे कहाए लद्धट्ठे जहा पण्णत्तीए, गंगदत्ते तहेव, इमोवि जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठवित्ता, पुरिससहस्सवाहिणीए सीयाए णिक्खंते जाव अणगारे जाए ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी।

उस काल उस समय में धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान् महावीर स्वामी गुणशीलक उद्यान में पधारे। भगवान् का आगमन सुन कर परिषद् दर्शन करने के लिए निकली। मकाई गाथापति भी भगवती सूत्र-वर्णित गगदत्त के समान

भगवान् के दर्शनार्थ निकला। भगवान् ने धर्मोपदेश दिया, जिसे सुन कर मकाई गाथापति के हृदय में वैराग्य-भाव उत्पन्न हो गया। उसने घर आ कर अपने ज्येष्ठ-पुत्र को कुटुम्ब का भार सौपा और हजार मनुष्यों से उठाई जाने वाली शिविका पर बैठ कर दीक्षा लेने के लिये भगवान् के पास आये, यावत् वे अनगार हो गये।

तए णं से मकाई अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। सेसं जहा खंदयस्स, गुणरयणं तवोकम्मं सोलसवासाइं परियाओ, तहेव विपुले सिद्धे ॥ १ ॥

इसके बाद मकाई अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के तथारूप स्थविरों के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और स्कन्दकजी के समान गुणरत्न-संवत्सर तप का आराधन किया। सोलह वर्ष की दीक्षा-पर्याय का पालन कर के अन्त में स्कन्दकजी के समान विपुलगिरि पर संथारा कर के सिद्ध हुए।

॥ प्रथम अध्ययन समाप्त ॥

दोच्चस्स उक्खेवओ। किंकमे वि एवं चेव जाव विपुले सिद्धे ॥ २ ॥

दूसरे अध्ययन में 'किंकम' गाथापति का वर्णन है। वे भी मकाई के समान ही प्रव्रजित हो कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

॥ द्वितीय अध्ययन समाप्त ॥

तच्चस्स उक्खेवओ। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए सेणिए राया चेल्लणा देवी। तत्थ णं रायगिहे णयरे अज्जुणए णामं मालागारे परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स बंधुमई णामं भारिया होत्था, सुकुमालपाणिपाया।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडदशा सूत्र के छठे वर्ग के दूसरे अध्ययन के जो भाव कहे, वे मैंने आपसे सुने। किंतु श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने तीसरे अध्ययन के क्या भाव कहे है, सो कृपा कर के कहिये।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—

"हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। वहाँ गुणशीलक नामक उद्यान था। उस नगर मे राजा श्रेणिक राज करता था। उसकी रानी का नाम 'चेलना' था। उस राजगृह में अर्जुन नाम का माली रहता था। उसकी पत्नी का नाम बन्धुमती था, जो अत्यन्त सुन्दर एव मुकुमार थी।

तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स रायगिहस्स णयरस्स बहिया एत्थ णं महं एगे पुप्फारामे होत्था, किण्हे जाव णिकुरंबभूए दसद्धवण्णकुसुमकुसुमिए पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे ।

राजगृह नगर के बाहर अर्जुन माली का एक विशाल पुष्पाराम (बगीचा) था । वह बगीचा नीले पत्तो से आच्छादित होने के कारण आकाश में चढ़े हुए घनघोर घटा के समान श्याम कांति से युक्त दिखाई देता था । उसमें पाँचों वर्ण के फूल खिले हुए थे । वह हृदय को प्रसन्न एवं प्रफुल्ल करने वाला एवं दर्शनीय था ।

तस्स णं पुप्फारामस्स अदूरसामंते तत्थ णं अज्जुणयस्स मालागारस्स अज्जयपज्जयपिइपज्जयागए अणेगकुलपुरिसपरंपरागए मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था, पोराणे दिव्वे सच्चे जहा पुण्णभद्दे । तत्थ णं मोग्गरपाणिस्स पडिमा एगं महं पलसहस्सं णिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय चिट्ठइ ।। १ ।।

उस पुष्पाराम के समीप ही मुद्‌गरपाणि नाम के यक्ष का यक्षायतन था, जो अर्जुन माली के पिता, पितामह (दादा) प्रपितामह (परदादा) आदि कुल-परम्परा से सम्बन्धित था । वह पूर्णभद्र के समान पुराना, दिव्य एवं सत्य था । उसमें

मुद्गरपाणि यक्ष की प्रतिमा थी। उसके हाथ में एक हजार पल परिमाण भार वाला लोहे का मुद्गर था ॥ १ ॥

तए णं से अज्जुणए मालागारे बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिजक्खस्स भत्ते यावि होत्था। कल्लाकल्लिं पच्छिपिडगाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाइ, गहित्ता जेणेव मोग्गर-पाणिस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स महरिहं पुप्फच्चयणं करेइ, करित्ता जाणुपायपडिए पणामं करेइ, करित्ता तओ पच्छा रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ ॥ २ ॥

अर्थ--वह अर्जुन माली बाल्य-काल से ही उस मुद्गर-पाणि यक्ष का भक्त था और प्रतिदिन बेत की बनी हुई चगेरी ले कर राजगृह नगर से बाहर अपने बगीचे में जाता था और फूलों को चुन-चुन कर इकट्ठा करता था। फिर उन फूलो मे से अच्छे-अच्छे बढ़िया--श्रेष्ठ फूल ले कर मुद्गरपाणि यक्ष की प्रतिमा के आगे चढ़ाता था। इस प्रकार वह उसकी पूजा करता था और भूमि पर दोनों घुटने टेक कर प्रणाम करता था। इसके बाद राजमार्ग के किनारे बैठ कर फूल बेचता था। इस प्रकार आजीविका करता हुआ वह सुखपूर्वक जीवन बिताता था।

तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं गोट्ठी परिवसइ अड्ढा जाव अपरिभूया जं कयसुकया यावि होत्था ।

अर्थ--उस राजगृह नगर में 'ललित' नाम की एक गोष्ठी (मित्र-मण्डली) रहती थी, जो अत्यन्त समृद्ध और अन्यकृत पराभवों से रहित थी । किसी समय राजा का कोई कार्य सम्पादित करने के कारण राजा ने उन पर प्रसन्न हो कर यह वचन दिया था कि--"वे अपनी इच्छानुसार कार्य करने में स्वतन्त्र है । राज्य की ओर से उन्हें कोई दण्ड नहीं दिया जायगा ।" अतः वह मित्र-मण्डली मनमाने कार्य करने मे स्वच्छन्द थी ।

तए णं रायगिहे णयरे अण्णया कयाइं पमोए घुट्ठे यावि होत्था । तए णं से अज्जुणए मालागारे कल्लं पभूयतराएहिं पुप्फेहिं कज्जमिति कट्टु पच्चूसकालसमयंसि बंधुमईए भारियाए सद्धिं पच्छियपिडयाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता रायगिहं णयरं मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ ।३।

एक दिन राजगृह नगर मे एक उत्सव की घोषणा हुई । अर्जुन माली ने विचार किया कि कल उत्सव मे अधिक फूलों

की आवश्यकता होगी। इसलिए वह प्रातःकाल उठा और बाँस की चंगेरी (डलिया) ले कर अपनी पत्नी वन्धुमती के साथ घर से निकला तथा नगर में होता हुआ बगीचे में पहुँचा और अपनी पत्नी के साथ फूलों को चुन कर एकत्रित करने लगा ॥ ३ ॥

तए णं तीसे ललियाए गोट्ठिए छ गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागया अभिरममाणा चिट्ठंति। तएणं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गर-पाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ।

अर्थ--उस समय पूर्वोक्त ललित-गोष्ठी के छह गोष्ठिक पुरुष, मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन में आ कर क्रीड़ा कर रहे थे। उधर अर्जुन माली अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ फूल सग्रह कर के उनमें से कुछ उत्तम फूल लेकर मुद्गरपाणि यक्ष की पूजा के लिए यक्षायतन की ओर जा रहा था।

तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अण्णमण्णं एवं वयासी-"एस खलु देवाणुप्पिया ! अज्जु-णए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इहं हव्वमा-गच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं अज्जुणयं

तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं गोट्ठी परिवसइ अड्ढा जाव अपरिभूया जं कयसुकया यावि होत्था ।

अर्थ--उस राजगृह नगर मे 'ललित' नाम की एक गोष्ठी (मित्र-मण्डली) रहती थी, जो अत्यन्त समृद्ध और अन्यकृत पराभवों से रहित थी। किसी समय राजा का कोई कार्य सम्पादित करने के कारण राजा ने उन पर प्रसन्न हो कर यह वचन दिया था कि--"वे अपनी इच्छानुसार कार्य करने में स्वतन्त्र हैं। राज्य की ओर से उन्हें कोई दण्ड नही दिया जायगा।" अतः वह मित्र-मण्डली मनमाने कार्य करने में स्वच्छन्द थी।

तए णं रायगिहे णयरे अण्णया कयाइं पमोए घुट्ठे यावि होत्था। तए णं से अज्जुणए मालागारे कल्लं पभूयतराएहिं पुप्फेहिं कज्जमिति कट्टु पच्चूसकालसमयंसि बंधुमईए भारियाए सद्धिं पच्छियपिडयाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता रायगिहं णयरं मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ ।३।

एक दिन राजगृह नगर मे एक उत्सव की घोषणा हुई। अर्जुन माली ने विचार किया कि कल उत्सव मे अधिक फूलों

की आवश्यकता होगी। इसलिए वह प्रातःकाल उठा और बाँस की चंगेरी (डलिया) ले कर अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ घर से निकला तथा नगर में होता हुआ बगीचे में पहुँचा और अपनी पत्नी के साथ फूलों को चुन कर एकत्रित करने लगा ॥ ३ ॥

तए णं तीसे ललियाए गोट्ठिए छ गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागया अभिरममाणा चिट्ठंति। तएणं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फुच्चयं करेइ, करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ।

अर्थ--उस समय पूर्वोक्त ललित-गोष्ठी के छह गोष्ठिक पुरुष, मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन में आ कर क्रीड़ा कर रहे थे। उधर अर्जुन माली अपनी पत्नी वन्धुमती के साथ फूल संग्रह कर के उनमें से कुछ उत्तम फूल लेकर मुद्गरपाणि यक्ष की पूजा के लिए यक्षायतन की ओर जा रहा था।

तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अण्णमण्णं एवं वयासी-"एस खलु देवाणुप्पिया! अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इहं हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं अज्जुणयं

मालागारं अवओडय-बंधणयं करित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणाणं विहरित्तए" त्ति कट्टु एयमट्ठं अण्णमण्णस्स पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता कवाडंतरेसु णिलुक्कंति णिच्चला णिप्फंदा तुसिणीया पच्छण्णा चिट्ठंति ॥४॥

अर्थ---बन्धमती भार्या के साथ आते हुए अर्जुन माली को देख कर उन छहों गोष्ठिक पुरुषों ने परस्पर विचार किया- "हे मित्रों ! यह अर्जुन माली अपनी पत्नी बंधुमती के साथ यहां आ रहा है। हम लोगों को उचित है कि इस अर्जुन माली को औंधी-मुश्कियों (दोनों हाथों को पीठ पीछे) से बलपूर्वक बाँध कर लुढ़का दें और फिर बन्धुमती के साथ खूब भोग भोगे ।" इस प्रकार परस्पर विचार कर के वे छहों किवाड़ के पीछे छिप गये और सांस रोक कर निश्चल खड़े हो गये ॥ ४ ॥

तए णं अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं जेणेव मोग्गरपाणिजक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए पणामं करेइ, करित्ता महरिहं पुप्फच्चणियं करेइ,करित्ता जाणुपायवडिए पणामं करेइ । तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा दवदवस्स कवाडंतरेहिंतो णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता अज्जुणयं मालागारं गिण्हंति, गिण्हित्ता अवओडय-बंधणं करेंति, करित्ता बंधु-

मईए मालागारीए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंज-माणा विहरंति ।

अर्थ–अर्जुन माली अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ मुद्गर-पाणि यक्ष के यक्षायतन में आया और भक्तिपूर्वक प्रफुल्लित नेत्रों से मुद्गरपाणि यक्ष की ओर देखा तथा प्रणाम किया। फिर फूल चढ़ा कर और दोनों घुटने टेक कर प्रणाम करने लगा। उसी समय उन छहों गोष्ठिक पुरुषों ने शीघ्र ही किवाडों के पीछे से निकल कर अर्जुन माली को पकड़ लिया और औंधी मुश्कें बाँध कर उसे एक ओर लुढका दिया और उसके सामने ही उसकी पत्नी बन्धुमती के साथ विविध प्रकार से भोग भोगने लगे।

तए णं तस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स अय-मज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पण्णे–"एवं खलु अहं बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिस्स भगवओ कल्लाकल्लिं जाव वित्तिं कप्पेमाणे विहरामि। तं जइ णं मोग्गरपाणिजक्खे इह सण्णिहिए होंति से णं किं ममं एयारूवं आवइं पावेज्जमाणं पासंते ? तं णत्थि णं मोग्गरपाणिजक्खे इह सण्णिहिए सुव्वत्तं तं एस कट्ठे"।५।

अर्थ––यह देख कर अर्जुन माली के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ–"मैं बाल्य-काल से ही अपने इष्टदेव मुद्गर-पाणि यक्ष की प्रतिदिन पूजा करता आ रहा हूँ। पूजा करने

के बाद ही आजीविका के लिये फूल बेच कर निर्वाह करता हूँ। यदि मुद्गरपाणि यक्ष यहां होता, तो क्या वह इस प्रकार की महा विपत्ति में पड़े हुए मुझे देख सकता था ? इसलिए यह निश्चय होता है कि यहाँ मुद्गरपाणि यक्ष उपस्थित नहीं है। यह तो केवल काठ ही है ॥ ५ ॥"

तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरयं अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता तडतडस्स बंधाइं छिंदइ, तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गिण्हइ, गिण्हित्ता ते इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएइ।

अर्थ—तब मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुन माली के मन में आये हुए विचार जान कर उसके शरीर में प्रवेश किया और उसके बन्धनों को तड़तड़ तोड़ डाला। उसके बाद मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट वह अर्जुन माली, एक हजार पल परिमाण (वर्तमान के तोल से साढ़े बासठ सेर अर्थात् एक मन साढ़े बाईस सेर) लोह के मुद्गर को ले कर बन्धुमती सहित उन छहों गोष्ठिक पुरुषों को मार डाला।

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अण्णाइट्ठे समाणे रायगिहस्स णयरस्स परिपेरंतेणं कल्लाकल्लिं छ इत्थिसत्तमे पुरिसे (पाठान्तरे—

इत्थिसत्तमे छ पुरिसे†) घाएमाणे विहरइ ॥६॥

अर्थ--इस प्रकार इन सातों को मार कर मुद्‌गरपाणि यक्ष से आविष्ट वह अर्जुन माली, राजगृह नगर के बाहर प्रतिदिन छह पुरुष और एक स्त्री, इस प्रकार सात मनुष्यों को मारता हुआ घूमने लगा ॥ ६ ॥

तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ ४—एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अण्णाइट्ठे समाणे रायगिहे बहिया छ इत्थिसत्तमे पुरिसे घाएमाणे विहरइ ।

अर्थ---उस समय राजगृह नगर के राजमार्ग आदि सभी स्थलों में बहुत-से व्यक्ति एक-दूसरे से इस प्रकार कहने लगे— "हे देवानुप्रिय ! मुद्‌गरपाणि यक्ष से आविष्ट हो कर अर्जुन माली राजगृह नगर के बाहर एक स्त्री और छह पुरुष, इस प्रकार सात व्यक्तियों को प्रतिदिन मारता है ।"

तए णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी— "एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ । तं माणं तुब्भे केइ तणस्स वा

† यह पाठ सोलहवी शताब्दी की एक हस्तलिखित प्रति मे है । यह प्रति जैनाचार्य पूज्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के पास देखी थी

कट्ठस्स वा पाणियस्स वा पुप्फफलाणं वा अट्ठाए सइ णिगच्छउ। मा णं तस्स सरीरस्स वावत्ती भविस्सइ" त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि घोसणं घोसेह, घोसित्ता खिप्पामेव ममेयं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबिय-पुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ॥ ७ ॥

अर्थ--यह समाचार सुन कर राजा श्रेणिक ने अपने सेवक-पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा--"हे देवानु-प्रिय ! राजगृह नगर के बाहर अर्जुन माली प्रतिदिन एक स्त्री और छह पुरुष--इस प्रकार सात व्यक्तियों को मारता है। इसलिए तुम सारे नगर में मेरी आज्ञा इस प्रकार घोषित करो कि--"यदि तुम लोगों की इच्छा जीवित रहने की हो, तो तुम लोग घास के लिए, लकड़ी के लिए, पानी के लिए और फल फुल के लिए राजगृह नगर के बाहर मत निकलो। यदि तुम लोग कहीं बाहर निकले, तो ऐसा न हो कि तुम्हारे शरीर का विनाश हो जाय।" हे देवानुप्रियो ! इस प्रकार दो तीन बार घोषणा कर के मुझे सूचित करो।"

इस प्रकार राजा की आज्ञा पा कर सेवक-पुरुषों ने राजगृह नगर में घूम-घूम कर उपरोक्त घोषणा की। घोषणा कर के राजा को सूचित कर दिया ॥ ७ ॥

तत्थ णं रायगिहे णयरे सुदंसणे णामं सेट्ठी परि-वसइ अड्ढे जाव अपरिभूए। तएणं से सुदंसणे समणो-

वासए यावि होत्था। अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ।

अर्थ--उस राजगृह नगर में सुदर्शन नाम के एक सेठ रहते थे। वे ऋद्धि-सम्पन्न और अपराभूत थे। वे श्रमणोपासक थे तथा जीवाजीवादि नव तत्त्वों के ज्ञाता थे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे जाव विहरइ। तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ?

उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। उनके पधारने के समाचार जान कर राजगृह नगर के राज-मार्ग आदि स्थानों में बहुत-से मनुष्य एक-दूसरे से कहने लगे—"हे देवानुप्रिय ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी यहाँ पधारे है, जिनके नाम-गोत्र श्रवण से भी महाफल होता है, तो दर्शन करने, वाणी सुनने तथा उनके द्वारा प्ररूपित विपुल अर्थ ग्रहण करने से जो फल होता है, उसका तो कहना ही क्या ? अर्थात् वह तो अवर्णनीय है।

तए णं तस्स सुदंसणस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म अयं अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे--एवं खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ। तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि एवं संपेहेइ, संपेहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवा-

गच्छित्ता करयल-परिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलि कट्टु एवं वयासी--"एवं खलु अम्मयाओ ! समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ । तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि जाव पज्जुवासामि ॥"

बहुत-से मनुष्यों के मुख से भगवान् के पधारने का समाचार सुन कर सुदर्शन सेठ के हृदय मे इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ--"श्रमण भगवान् महावीर स्वामी राजगृह नगर के बाहर गुणशीलक उद्यान मे पधारे है । इसलिए मुझे उचित है कि मै भगवान् को वन्दन करने जाऊँ ।" इस प्रकार विचार कर अपने माता-पिता के पास आये और हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोले--"हे माता-पिता ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी यहाँ पधारे है। इसलिए मैं उन्हें वन्दन-नमस्कार करने के लिए जाना चाहता हूँ" ॥ ८ ॥

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो एवं वयासी-"एवं खलु पुत्ता ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ, तं माणं तुमं पुत्ता ! समणं भगवं महावीरं वंदए णिग्गच्छाहि । मा णं तव सरीरयस्स वावत्ती भविस्सइ । तुमं णं इह गए चेव समणं भगवं महावीरं वंदाहि णमंसाहि ॥"

अर्थ--सुदर्शन सेठ के निवेदन पर माता-पिता ने कहा--

"हे पुत्र ! अर्जुन माली राजगृह नगर के बाहर मनुष्यों को मारता हुआ घूम रहा है। इसलिए हे पुत्र ! तुम भगवान् को वन्दना करने के लिए नगर से बाहर मत जाओ। वहाँ जाने से न-जाने तुम्हारे शरीर पर कोई विपत्ति आ जाय। इसलिए तुम यही से भगवान् को वन्दन नमस्कार कर लो !"

तए णं से सुदंसणे सेट्ठी अम्मापियरं एवं वयासी—"किण्णं अहं अम्मयाओ ! समणं भगवं महावीरं इह-मागयं इह-पत्तं इह-समोसढं इह-गए चेव वंदिस्सामि णमंसिस्सामि ? तं गच्छामि णं अहं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि" ॥ ९ ॥

माता-पिता के वचन सुन कर सुदर्शन सेठ इस प्रकार बोले—"हे माता-पिता ! जब श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी यहाँ पधारे है, विराजित हैं और यहाँ समवसृत है, तो भी मै उनको यहीं से वन्दन-नमस्कार करूँ और उनकी सेवा में उपस्थित न होऊँ, यह कैसे हो सकता है ? मै भगवान् के दर्शन करने के लिए जाना चाहता हूँ। इसलिए आप मुझे आज्ञा दीजिये जिससे मैं वहाँ जा कर भगवान् को वन्दन-नमस्कार यावत् पर्युपासना करूँ" ॥ ९ ॥

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो जाहे णो संचा-यंति बहूहिं आघवणाहिं ४ जाव परूवेत्तए। तए णं से

अम्मापियरो ताहे अकामया चेव सुदंसणं सेट्ठिं एवं वयासी--"अहासुहं देवाणुप्पिया !" तएणं से सुदंसणे सेट्ठि अम्मापिईहिं अब्भणुण्णाए समाणे ण्हाए सुद्धप्पा-वेसाइं जाव सरीरे, सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पायविहारचारेणं रायगिहं णयरं मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणस्स अदूरसामंतेणं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

अर्थ--सुदर्शन सेठ को उसके माता-पिता अनेक प्रकार की युक्तियों से भी नही समझा सके, तो उन्होने अनिच्छा पूर्वक इस प्रकार कहा--'हे पुत्र ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो।' माता पिता से आज्ञा प्राप्त कर सुदर्शन सेठ ने स्नान किया और शुद्ध वस्त्र धारण किये। इसके बाद वे भगवान् के दर्शन करने के लिए अपने घर से निकले और पैदल ही राज-गृह नगर के मध्य होते हुए मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन के न अति दूर न अति निकट हो कर गुणशीलक उद्यान मे जाने लगे।

तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं अदूरसामंतेणं वीईवयमाणं वीईवयमाणं पासइ, पासित्ता आसुरुत्ते तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं उल्ला-लेमाणे उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।। १० ।।

अर्थ--सुदर्शन श्रमणोपासक को जाते हुए देख कर मुद्-गरपाणि यक्ष कुपित हुआ और एक हजार पल का लोहमय मुद्गर घुमाता हुआ सुदर्शन सेठ की ओर जाने लगा ॥१०॥

तए णं से सुदंसणे समणोवासए मोग्गरपाणिं जक्खं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अभिए अतत्थे अणुव्विग्गे अक्खुभिए अचलिए असंभंते वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ, पमज्जित्ता करयल एवं वयासी--"णमोत्थुणं अर-हंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं, णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स पुव्विं च णं मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए थूलए पाणाइ-वाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, थूलए मुसावाए, थूलए अदिण्णादाणए, सदारसंतोसे कए जावज्जीवाए इच्छा-परिमाणे कए जावज्जीवाए। तं इयाणिं पि णं तस्सेव अंतियं सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए सव्वं मुसावायं सव्वं अदिण्णादाणं सव्वं मेहुणं सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसण-सल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए।

जइ णं एत्तो उवसग्गाओ मुच्चिस्सामि तो मे कप्पइ

पारेत्तए। अहण्णं एत्तो उवसग्गाओ ण मुच्चिस्सामि तओ मे तहा पच्चक्खाए चेव त्ति कट्टु सागारं पडिमं पडिवज्जइ।

अर्थ--मुद्गरपाणि यक्ष को अपनी ओर आता हुआ देख कर सुदर्शन सेठ जरा भी भय, त्रास, उद्वेग और क्षोभ को प्राप्त नहीं हुए। उनका हृदय जरा भी विचलित और संभ्रान्त नहीं हुआ। उन्होने निर्भय हो कर अपने वस्त्र के अंचल से भूमि का प्रमार्जन किया और मुख पर उत्तरासंग धारण किया, फिर पूर्व-दिशा की ओर मुँह कर के बांए घुटने को ऊँचा किया और दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक पर अञ्जलि-पुट रखा। इसके बाद इस प्रकार बोले--"नमस्कार हो उन अरिहन्तो को जो मोक्ष में पधार गये हैं और नमस्कार हो श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी को जो मोक्ष में पधारने वाले है। मैंने पहले भगवान् महावीर स्वामी से स्थूल प्राणातिपात, स्थूल मृषावाद और स्थूल अदत्तादान का त्याग किया। स्वदार-सतोष और इच्छा परिमाण (स्थूल परिग्रह त्याग) अणुव्रतों को धारण किया था। अव इस समय उन्ही भगवान् महावीर स्वामी की साक्षी से यावज्जीवन प्राणातिपात का सर्वथा त्याग करता हूँ। इसी प्रकार मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह का यावज्जीवन के लिए त्याग करता हूँ और क्रोध, मान, माया तथा लोभ यावत् मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह पापों का यावज्जीवन के लिए सर्वथा त्याग करता हूँ। अशन, पान, खादिम और स्वादिम

इन चारों प्रकार के आहार का भी यावज्जीवन त्याग करता हूँ ।"

"यदि मैं इस उपसर्ग से बच जाऊँ, तो त्याग पार लूंगा, अन्यथा उपरोक्त त्याग यावज्जीवन के लिए है"--ऐसा निश्चय करके सुदर्शन सेठ ने सागारी अनशन धारण कर लिया ॥११॥

तए णं से मोग्गरपाणी-जक्खे तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता णो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए ।

अर्थ--वह मुद्गरपाणि यक्ष एक हजार पल के बने हुए उस लोह के मुद्गर को घुमाता हुआ सुदर्शन श्रमणोपासक के निकट आया । किन्तु सुदर्शन श्रमणोपासक को अपने तेज से अभिभूत नही कर सका अर्थात् उसे किसी प्रकार से कष्ट नही पहुँचा सका ।

तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं सव्वओ समंताओ परिघोलेमाणे परिघोलेमाणे जाहे णो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए ताहे सुदंसणस्स समणोवासयस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा सुदंसणं समणोवासयं अणिमिसाए दिट्ठीए सुचिरं णिरिक्खइ, णिरिक्खित्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरं विप्पजहइ, विप्पजहित्ता तं पल-

सहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ॥ १२ ॥

अर्थ--वह मुद्‌गरपाणि यक्ष, सुदर्शन श्रमणोपासक के चारों और घूमता हुआ जब किसी भी प्रकार से उनके ऊपर अपना बल नहीं चला सका, तो सुदर्शन श्रमणोपासक के सामने आ कर खड़ा हो गया और अनिमेष दृष्टि से उन्हें वहुत देर तक देखता रहा। इसके बाद यक्ष ने अर्जुन माली का शरीर छोड़ दिया और हजार पल के लोहमय मुद्‌गर को ले कर, जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में चला गया ॥ १२ ॥

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं विप्पमुक्के समाणे धसत्ति धरणियलंसि सव्वंगेहिं णिवडिए।

तए णं से सुदंसणे समणोवासए णिरुवसग्गमिति कट्टु पडिमं पारेइ।

अर्थ—अर्जुन माली उस मुद्‌गरपाणि यक्ष से मुक्त होते ही 'धस' इस प्रकार के शब्द के साथ पृथ्वी पर गिर पड़ा।

सुदर्शन सेठ ने अपने आपको उपसर्ग-रहित जान कर अपनी प्रतिज्ञा को पाली (और उस पड़े हुए अर्जुन माली को सचेष्ट करने के लिए प्रयत्न करने लगे)।

तए णं से अज्जुणए मालागारे तओ मुहुत्तंतरेणं आसत्थे समाणे उट्ठेइ, उट्ठित्ता सुदंसणं समणोवासयं

एवं वयासी--"तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! के ? कहिं वा संपत्थिया ?"

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणयं मालागारं एवं वयासी--"एवं खलु देवाणुप्पिया ! अहं सुदंसणे णामं समणोवासए अभिगयजीवाजीवे गुणसिलए चेइए समणं भगवं महावीरं वंदिउं संपत्थिए" ॥ १३ ॥

अर्थ--वह अर्जुन माली कुछ समय के बाद स्वस्थ हो कर खड़ा हुआ और सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला--"हे देवानुप्रिय ! आप कौन हैं और कहाँ जा रहे हैं ?" यह सुन कर सुदर्शन श्रमणोपासक ने कहा--"हे देवानुप्रिय ! मैं जीवाजीवादि नौ तत्त्वों का ज्ञाता सुदर्शन नामक श्रमणोपासक हूँ और गुणशीलक उद्यान में पधारे हुए श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार करने जा रहा हूँ" ॥१३॥

तए णं से अज्जुणए मालागारे सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी--"तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए।" "अहासुहं देवाणुप्पिया !"

अर्थ--यह सुन कर अर्जुन माली, सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला--"हे देवानुप्रिय ! मैं भी तुम्हारे साथ श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन नमस्कार करने यावत् पर्युपासना करने के लिये चलना चाहता हूँ।" सुदर्शन श्रमणोपासक

ने कहा--"हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हे सुख हो, वैसा करो ।"

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासइ । तएणं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स समणोवासयस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स तीसे य धम्मकहा सुदंसणे पडिगए ॥ १४ ॥

अर्थ--इसके बाद सुदर्शन श्रमणोपासक, अर्जुन माली के साथ गुणशीलक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये और तीन वार आदक्षिण-प्रदक्षिणपूर्वक वन्दन-नमस्कार कर सेवा करने लगे । भगवान् महावीर स्वामी ने उन दोनों को धर्म-कथा सुनाई । धर्म-कथा सुन कर सुदर्शन श्रमणोपासक अपने घर चले गये ॥ १४ ॥

तए णं से अज्जुणए मालागारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ एवं वयासी--"सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि । अहासुहं देवाणुप्पिया ! तए णं से अज्जुणए मालागारे उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जाव अणगारे जाए जाव विहरइ ।

अर्थ--इसके वाद अर्जुन माली श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्म-कथा सुनकर और हृदय में धारण कर के हृष्ट-तुष्ट हृदय से इस प्रकार बोला-"हे भगवन् ! आप द्वारा कही हुई धर्म-कथा सुन कर मुझे उस पर श्रद्धा हुई है। मै निर्ग्रन्थ-प्रवचनों पर श्रद्धा करता हूँ। इसलिए हे भगवन् ! में आपसे दीक्षा अगीकार करना चाहता हूँ।" भगवान् ने कहा--"हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा करो।" भगवान् के ये वचन सुन कर अर्जुन माली ईशान कोण में गये और स्वयमेव पञ्चमुष्ठि लोच कर के अनगार वन गये।

तए णं से अज्जुणए अणगारे जं चेव दिवसं मुंडे जाव पव्वइए तं चेव दिवसं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता इमं एयारूवं अभिग्गहं उग्गिण्हइ-"कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स विहरित्तए" त्ति कट्टु अयमेयारूवं अभिग्गहं उग्गिण्हइ, उग्गिण्हित्ता जावज्जीवाए जाव विहरइ ॥ १५ ॥

अर्थ--अर्जुन अनगार जिस दिन प्रव्रजित हुए, उसी दिन श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन नमस्कार कर के ऐसा अभिग्रह धारण किया--"मै यावज्जीवन अन्तर-रहित वेले-वेले पारणा करता हुआ और तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरूँगा"--ऐसा अभिग्रह ले कर अर्जुन अनगार विचरने लगे ॥ १५ ॥

तए णं से अज्जुणए अणगारे छट्ठक्खमणपारणयंसि पढमपोरिसीए सज्झायं करेइ, जहा गोयमसामी जाव अडइ।

अर्थ--उसके वाद अर्जुन अनगार ने बेले के पारणे के दिन पहले प्रहर में स्वाध्याय किया, दूसरे प्रहर में ध्यान किया और तीमरे प्रहर में गौतम स्वामी के समान गोचरी गये।

तए णं तं अज्जुणयं अणगारं रायगिहे णयरे उच्च-णीय जाव अडमाणं बहवे इत्थिओ य पुरिसा य डहरा य महल्ला य जुवाणा य एवं वयासी-"इमेणं मे पिया मारिए, इमेणं मे माया मारिया, भाया मारिए, भगिणी मारिया, भज्जा मारिया, पुत्ते मारिए, धूया मारिया, सुण्हा मारिया, इमेणं मे अण्णयरे सयणसंबंधिपरियणे मारिए" त्ति कट्टु अप्पेगइया अक्कोसंति, अप्पेगइया हीलंति, णिंदंति, खिसंति, गरिहंति, तज्जेंति, तालेंति॥

अर्थ--राजगृह नगर मे ऊँच-नीच, मध्यम कुलों मे गृह-सामुदायिक भिक्षा के लिए फिरते हुए अर्जुन अनगार को देखा, तो स्त्री, पुरुष, बच्चे, और युवक सभी लोगो में से कोई इस प्रकार कहने लगे--"इसने मेरे पिता को मारा। इसने मेरी माता मारी। इसने मेरा भाई मारा। इसने मेरी वहिन मारी। इसने मेरी पत्नी मारी। इसने मेरा पुत्र मारा। इसने मेरी पुत्री मारी। इसने मेरी पुत्रवधू मारी। इसने मेरे अमुक स्वजन सम्बन्धी को मारा"--ऐसा कह कर कई कटु

वचनों से उनका तिरस्कार करने लगे, कई निन्दा करने लगे, कई उनको खिझाने लगे, कई उनके दोषों को प्रकट करने लगे, कोई उन्हें तर्जना करने लगे और कोई उन्हे थप्पड़, लाठी, ईट आदि से मारने लगे ।। १६ ।।

तए णं से अज्जुणए अणगारे तेहिं बहूहिं इत्थीहि य पुरिसेहि य डहरेहि य महल्लेहि य जुवाणएहि य आओसेज्जमाणे जाव तालेज्जमाणे तेसिं मणसा वि अप्पउस्समाणे सम्मं सहइ, सम्मं खमइ, सम्मं तितिक्खइ, सम्मं अहियासेइ, सम्मं सहमाणे, खममाणे, तितिक्खमाणे, अहियासमाणे, रायगिहे णयरे उच्चणीयमज्झिमकुलाइं अडमाणे जइ भत्तं लभइ तो पाणं ण लभइ, जइ पाणं लभइ तो भत्तं ण लभइ ।

अर्थ--बहुत सी स्त्रियों, पुरुषों, बच्चों, वृद्धों और तरुणों से तिरस्कृत यावत् ताड़ित वे अर्जुन अनगार, उन लोगों पर मन से भी द्वेष नहीं करते और उनके दिये हुए आक्रोश आदि परीषहों को समभाव से सहन करने लगे। वे क्षमा-भाव धारण कर एवं दीन-भाव से रहित, मध्यस्थ भावना मे विचरने लगे तथा निर्जरा की भावना से सभी परीषह उपसर्गों को समभावपूर्वक सहन करने लगे । इस प्रकार सभी परीषह उपसर्गों को समभावपूर्वक सहन करते हुए ऊँच-नीच-मध्यम कुलों में गृह सामुदानिक भिक्षा के लिए विचरते हुए उन अर्जुन अनगार को

कहीं आहार मिलता था, तो पानी नही मिलता और यदि पानी मिलता था, तो आहार नही मिलता था ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे अदीणे अविमणे अकलुसे अणाइले अविसाई अपरितंतजोगी अडइ, अडित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव गुणसिलए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे जहा गोयमसामी जाव पडिदंसेइ पडिदंसित्ता समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे अमुच्छिए बिलमिव पण्णगभूएणं अप्पाणेणं तमाहारं आहारेइ ।१७।

अर्थ---इस प्रकार रूखा सूखा जैसा भी आहार मिल जाता, उसे अदीन, अविमन, अकलुष, अक्षोभित तथा विषाद एवं तनमनाट आदि विक्षेप भावों से सर्वथा दूर रह कर ग्रहण करते और गुणशीलक उद्यान में श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी के पास आते । भगवान् को आहार पानी दिखाते और आज्ञा प्राप्त कर के गृद्धिपन से रहित, जिस प्रकार साँप बिल में प्रवेश करता है, उसी प्रकार राग-द्वेष से रहित हो, उस आहार पानी का सेवन करते हुए संयम का निर्वाह करते थे ।। १७ ।।

तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइं रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता बहिं जणवयविहारं विहरइ । तए णं से अज्जुणए अणगारे

तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं महाणुभागेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णे छम्मासे सामण्ण-परियागं पाउणइ, अद्धमासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ, तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ जाव सिद्धे ॥ १८ ॥

अर्थ--किसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी राजगृह नगर के गुणशीलक उद्यान से निकल कर बाहर जनपद मे विचरने लगे।

उन महाभाग अर्जुन अनगार ने भगवान् के दिये हुए तथा स्वयं की उत्कृष्ट भावना से स्वीकार किये हुए, अत्यन्त प्रभावशाली उदार, विपुल एवं प्रधान तपःकर्म से आत्मा को भावित करते हुए छह महीने तक चारित्र पर्याय का पालन किया। अर्द्ध मास की सलेखना कर, तीस भक्त अनशन छेदित कर, जिस कार्य के लिए संयम अगीकार किया था, उसे सिद्ध कर लिया अर्थात् अव्याबाध सुख-सम्पन्न मोक्ष प्राप्त कर लिया ॥

॥ तीसरा अध्ययन समाप्त ॥

उक्खेवओ चउत्थस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए। तत्थ णं सेणिए राया। कासवे णामं गाहावई परिवसइ, जहा मकाई, सोलस वासा परियाओ विपुले सिद्धे। ४।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन् ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग के तीसरे अध्ययन में जो भाव फरमाये, वे मैने सुने। अब चौथे अध्ययन में क्या भाव फरमाये है, सो कृपा कर के कहिये।"

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय राजगृह नामक नगर था। राजगृह नगर के बाहर गुणशीलक उद्यान था। श्रेणिक राजा राज करते थे। उस नगर में 'काश्यप' नाम के एक गाथापति रहते थे। उन्होने मकाई गाथापति के समान भगवान् महावीर स्वामी से दीक्षा अंगीकार की। सोलह वर्ष तक श्रमण-पर्याय का पालन किया और अन्त में विपुलगिरि पर सिद्ध हुए॥ ४॥

एवं खेमए वि गाहावई, णवरं कांकंदी णयरी, सोलस वासा परियाओ विपुले पव्वए सिद्धे॥ ५॥

अर्थ--इसी प्रकार क्षेमक गाथापति का भी चारित्र है। ये काकन्दी नगरी के रहने वाले थे। भगवान् के पास दीक्षा ले कर सोलह वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया और अन्त में विपुलगिरि पर सिद्ध हुए॥ ५॥

एवं धिइहरे वि गाहावई, कांकंदी णयरी सोलस वासा परियाओ जाव विपुले सिद्धे॥ ६॥

अर्थ--इसी प्रकार धृतिधर गाथापति का भी वर्णन है। ये काकन्दी नगरी के रहने वाले थे। भगवान् के पास दीक्षा ले

कर सोलह वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया और अन्त में विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ ६ ॥

एवं केलासे वि गाहावई णवरं सागेए णयरे बारस वासाइं परियाओ । विपुले सिद्धे ॥ ७ ॥

अर्थ--इसी प्रकार कैलाश गाथापति का चरित्र है । ये साकेत नगरी के थे। दीक्षा ले कर बारह वर्ष तक चारित्र का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ ७ ॥

एवं हरिचंदणे वि गाहावई सागेए णयरे बारस-वासा परियाओ । विपुले सिद्धे ॥ ८ ॥

अर्थ--इसी प्रकार हरिचन्दन गाथापति का वर्णन है । ये साकेत नगरी के थे । दीक्षा ले कर बारह वर्ष तक चारित्र का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ ८ ॥

एवं वारेत्तए वि गाहावई, णवरं रायगिहे णयरे बारस-वासा परियाओ । विपुले सिद्धे ॥ ९ ॥

अर्थ--इसी प्रकार वारवत्तक गाथापति का वर्णन है । ये राजगृह नगर के थे। दीक्षा ले कर बारह वर्ष तक श्रमणपर्याय का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ ६ ॥

एवं सुदंसणे वि गाहावई णवरं वाणियगामे णयरे दुइपलासए चेइए, पंच वासा परियाओ। विपुले सिद्धे॥

अर्थ--इसी प्रकार सुदर्शन गाथापति का वर्णन है । ये वाणिज्य ग्राम के थे । ग्राम के बाहर द्युतिपलाश उद्यान था ।

भगवान् के पास दीक्षा ले कर पाच वर्ष तक श्रमण-धर्म का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ १० ॥

एवं पुण्णभद्दे वि गाहावई वाणियगामे णयरे, पंच वासा परियाओ। विपुले सिद्धे ॥ ११ ॥

अर्थ--इसी प्रकार पूर्णभद्र गाथापति का वर्णन है। ये वाणिज्य ग्राम के थे। भगवान् के पास दीक्षा ले कर पाँच वर्ष तक संयम पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥११॥

एवं सुमणभद्दे वि गाहावई सावत्थी णयरी। बहुवासा परियाओ। विपुले सिद्धे ॥ १२ ॥

अर्थ--इसी प्रकार सुमनभद्र गाथापति का वर्णन है। ये श्रावस्ती नगरी के थे। दीक्षा ले कर बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥१२॥

एवं सुपइट्ठे वि गाहावई सावत्थी णयरी सत्तावीसं वासा परियाओ। विपुले सिद्धे ॥ १३ ॥

अर्थ--इसी प्रकार सुप्रतिष्ठ गाथापति का वर्णन है। ये श्रावस्ती नगरी के थे। दीक्षा ले कर सत्ताईस वर्ष तक संयम का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ १३ ॥

एवं मेहे वि गाहावई रायगिहे णयरे, बहूहिं वासाइं परियाओ। विपुले सिद्धे ॥ १४ ॥

अर्थ--इसी प्रकार मेघ गाथापति का वर्णन है। ये राज-

गृह नगर के थे। दीक्षा ले कर बहुत वर्षों तक संयम का पालन किया और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥ १४ ॥

॥ ये चौदह अध्ययन समाप्त हुए ॥

उक्खेवओ पण्णरसमस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं पोलासपुरे णयरे, सिरीवणे उज्जाणे तत्थ णं पोलासपुरे णयरे विजए णामं राया होत्था। तस्स णं विजयस्स रण्णो सिरी णामं देवी होत्था, वण्णओ। तस्स णं विजयस्स रण्णो पुत्ते सिरीए देवीए अत्तए अइमुत्ते णामं कुमारे होत्था, सुकुमाले।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन् ! चौदहवें अध्ययन का भाव मैने आपसे सुना। अब कृपा कर पन्द्रहवें अध्ययन के भाव कहिये।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा--"जम्बू ! उस काल उस समय में पोलासपुर नामक नगर था। वहाँ श्रीवन नामक उद्यान था। विजय नाम का राजा था। उसकी रानी का नाम श्रीदेवी था। वह सर्वांग सुन्दर थी। विजय राजा का पुत्र तथा श्रीदेवी रानी का आत्मज 'अतिमुक्तक' नामक कुमार था। वह अत्यन्त सुकुमार था।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं म

जाव सिरीवणे विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई जहा पण्णत्तीए जाव पोलासपुरे णयरे उच्चणीय जाव अडइ ॥ १ ॥

अर्थ--उस काल उस समय श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विचरते हुए श्रीवन उद्यान में पधारे। भगवान् के ज्येष्ठ अंतेवासी इन्द्रभूति, भगवान् को पूछ कर व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र के वर्णन के अनुसार पोलासपुर नगर में ऊँच-नीच-मध्यम कुलों में भिक्षा के लिए भ्रमण करने लगे।

इमं च णं अइमुत्ते कुमारे ण्हाए जाव विभूसिए बहूहिं दारएहिं य दारियाहिं य डिंभएहिं य डिंभियाहिं य कुमारएहिं य कुमारियाहिं य सद्धिं संपरिवुडे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव इंदट्ठाणे तेणेव उवागए। तेहिं बहूहिं दारएहिं य दारियाहिं य डिंभएहिं य डिंभियाहिं य कुमारएहिं य कुमारियाहिं य सद्धिं संपरिवुडे अभिरममाणे अभिरममाणे विहरइ।

अर्थ---उसी समय अतिमुक्तक कुमार स्नान कर के अलंकारों से अलंकृत हुए और बहुत-से लड़के-लड़कियों, बालक बालिकाओं और कुमार-कुमारिकाओं के साथ अपने घर से निकल कर इन्द्रस्थान (बालको के खेलने के स्थान) पर आये और उन सभी के साथ खेलने लगे।

तए णं भगवं गोयमे पोलासपुरे णयरे उच्चणीय जाव अडमाणे इंदट्ठाणस्स अदूरसामंतेणं वीईवयइ। तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासइ, पासित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागए। भगवं गोयमं एवं वयासी—"के णं भंते! तुब्भे, किं वा अडह?" ॥ २ ॥

अर्थ—उसी समय भगवान् गौतम स्वामी, पोलासपुर नगर के ऊँच-नीच-मध्यम कुलों में गृहसामुदानिक भिक्षा के लिए भ्रमण करते हुए उस इन्द्रस्थान के समीप हो कर निकले। भगवान् गौतम स्वामी को आते हुए देख कर अतिमुक्तक कुमार उनके समीप गये और इस प्रकार बोले—"हे भगवन्! आप कौन हैं और क्यों घूम रहे हैं?" ॥ २ ॥

तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी—"अम्हे णं देवाणुप्पिया! समणा-णिग्गंथा इरियासमिया जाव बंभयारी, उच्चणीय जाव अडामो।"

तए णं अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी—"एह णं भंते! तुब्भे जण्णं अहं तुब्भं भिक्खं दवावेमि" त्ति कट्टु भगवं गोयमं अंगुलिए गिण्हइ, गिण्हित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए।

अर्थ—अतिमुक्तक कुमार का प्रश्न सुन कर गौतम स्वामी ने कहा—"हे दे..नुप्रिय! हम श्रमण-निर्ग्रन्थ है। हम

समिति आदि पाँच समितियों से युक्त यावत् पूर्ण ब्रह्मचारी होते हैं तथा ऊँच, नीच और मध्यम कुलों में भिक्षा के लिए गोचरी करते है।" यह सुन कर अतिमुक्तक कुमार ने गौतम स्वामी से कहा--"हे भगवन्! आप मेरे साथ पधारें। मै आपको भिक्षा दिलाता हूँ।" ऐसा कह कर गौतम स्वामी की अगुली पकड़ ली और उन्हें अपने घर ले गया।

तए णं सा सिरिदेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागया। भगवं गोयमं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पडिलाभेइ जाव पडिविसज्जेइ ॥ ३ ॥

अर्थ—भगवान् गौतम को आते देख कर रानी श्रीदेवी अत्यन्त प्रसन्न हुई। आसन से उठ कर वह सात आठ चरण सामने गई और भगवान् गौतम स्वामी को तीन बार विधि-सहित वन्दन-नमस्कार किया। फिर उच्च भावों से आदर सहित अशन, पान, खादिम और स्वादिम--चारों ही प्रकार का आहार बहराया और उन्हें विसर्जित किया अर्थात् भवन-द्वार तक उन्हे पहुँचाने गई ॥ ३ ॥

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी—"कहिणं भंते! तुब्भे परिवसह ?" तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी--एवं खलु देवाणुप्पिया!

मम धम्मायरिए धम्मोवएसए भगवं महावीरे आइगरे जाव संपाविउकामे, इहेव पोलासपुरस्स णयरस्स बहिया सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तत्थ णं अम्हे परिवसामो।"

अर्थ--इसके बाद अतिमुक्तक कुमार ने भगवान् गौतम स्वामी से इस प्रकार पूछा--"भगवन्! आप कहाँ रहते है?"

गौतम स्वामी ने कहा--"देवानुप्रिय! मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक धर्म की आदि करने वाले यावत् मोक्ष के कामी श्रमण भगवान् महावीर इस पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन उद्यान में कल्पानुसार अवग्रह ले कर तप-सयम से आत्मा को भावित करते हुए विराजते है। मै वहीं उन्हीं के पास रहता हूँ।"

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी-"गच्छामि णं भंते! अहं तुब्भेहिं सद्धिं समणं भगवं महावीरं पायवंदए?" "अहासुहं देवाणुप्पिया" ॥४॥

अर्थ--यह सुन कर अतिमुक्तक कुमार ने कहा--"हे भगवन्! मै भी आपके साथ, भगवान् को वन्दन करने के लिए चलूँ?" गौतम स्वामी ने कहा--"हे देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो" ॥ ४ ॥

तए णं से अइमुत्ते कुमारे गोयमेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं

भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ जाव पज्जुवासइ ।

अर्थ--तब अतिमुक्तक कुमार, गौतम स्वामी के साथ श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी के समीप गये और तीन वार विधिपूर्वक वंदन-नमस्कार कर के उपासना करने लगे ।

तए णं भगवं गोयमे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए जाव पडिदंसेइ, पडिदंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।

अर्थ--गौतम स्वामी, श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी के समीप आये और आहार दिखाया। आहार-पानी कर लेने के बाद संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

तए णं से समणे भगवं महावीरे अइमुत्तस्स कुमारस्स धम्मकहा । तए णं से अइमुत्ते कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ "जं णवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि। तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए जाव पव्वयामि ।" "अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंध करेह" ॥५॥

अर्थ--श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने अतिमुक्तक कुमार को धर्म-कथा कही। धर्म-कथा सुन कर अतिमुक्तक कुमार अत्यन्त हृष्ट तुष्ट हो कर बोले--"हे भगवन् ! मैं अपने माता-पिता की आज्ञा ले कर आपके पास दीक्षा लेना

चाहता हूँ।" भगवान् ने कहा—"हे देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो, किंतु धर्म-कार्य में प्रमाद मत करो" ॥५॥

तए णं से अइमुत्ते कुमारे जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागए जाव पव्वइत्तए। अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—"बाले सि ताव तुमं पुत्ता! असंबुद्धेसि तुमं पुत्ता! किण्णं तुमं जाणासि धम्मं!"

अर्थ—अतिमुक्तक कुमार अपने माता-पिता के पास आ कर इस प्रकार कहने लगे—"हे माता-पिता! आपकी आज्ञा होने पर मैं श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी से दीक्षा लेना चाहता हूँ।" माता-पिता ने कहा—"हे पुत्र! तुम अभी बच्चे हो। तुम्हे तत्त्वों का ज्ञान नहीं है। हे पुत्र! तुम धर्म को कैसे जान सकते हो?"

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—"एवं खलु अहं अम्मयाओ! जं चेव जाणामि तं चेव ण जाणामि, जं चेव ण जाणामि तं चेव जाणामि।" तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी—"कहं णं तुमं पुत्ता! जं चेव जाणासि तं चेव ण जाणासि, जं चेव ण जाणासि तं चेव जाणासि?" ॥६॥

अर्थ—यह सुन कर अतिमुक्तक कुमार ने कहा—"हे माता-पिता! मै जिसे जानता हूँ, उसे नही जानता और जिसे नही जानता, उसे जानता हूँ।" अतिमुक्तक कुमार की यह

बात सुन कर उसके माता-पिता ने कहा—"हे पुत्र ! तुमने यह क्यों कहा कि—"जिसे मै जानता हूँ, उसे नही जानता और जिसे नहीं जानता हूँ, उसे जानता हूँ। इसका क्या अभिप्राय है ?" ॥ ६ ॥

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी—"जाणामि अहं अम्मयाओ ! जहा जाएणं अवस्सं मरियव्वं, ण जाणामि अहं अम्मयाओ ! काहे वा कहिं वा कहं वा केच्चिरेण वा ? ण जाणामि अहं अम्मयाओ ! केहिं कम्मायणेहिं जीवा णेरइयतिरिक्खजोणियमणुस्सदेवेसु उववज्जंति, जाणामि णं अम्मयाओ ! जहा सएहिं कम्मायणेहिं जीवा णेरइय जाव उववज्जंति, एवं खलु अहं अम्मयाओ ! जं चेव जाणामि तं चेव ण जाणामि, जं चेव ण जाणामि तं चेव जाणामि। तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए जाव पव्वइत्तए।"

अर्थ—माता-पिता के उपरोक्त वचन सुन कर अतिमुक्तक कुमार बोले—"हे माता-पिता ! मै यह जानता हूँ कि जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य मरेगा, किन्तु यह नही जानता कि वह किस काल में, किस स्थान पर, किस प्रकार और कितने समय के बाद मरेगा ? इसी प्रकार हे माता पिता ! मैं यह नही जानता कि किन कर्मो से जीव नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव-योनि में उत्पन्न होते हैं, परन्तु यह अवश्य जानता हूँ कि जीव अपने ही कर्मो से उत्पन्न होते है। हे

माता-पिता ! मैने इसीलिए कहा कि जिसे मै नही जानता, उसे जानता हूँ और जिसे जानता हूँ, उसे नहीं जानता । इस-लिए हे माता-पिता ! आपकी आज्ञा होने पर मै श्रमण-भग-वान् महावीर स्वामी से दीक्षा लेना चाहता हूँ ।"

तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो जाहे णो संचाएंति बहूहिं आघवणाहिं जाव तं इच्छामो ते जाया ! एगदिवसमवि रायसिरिं पासेत्तए । तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापिउवयणमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ । अभिसेओ जहा महाबलस्स णिक्खमणं जाव सामाइय-माइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ । बहूइं वासाइं सामण्णपरियाओ, गुणरयणं जाव विपुले सिद्धे ।।७।।

अर्थ--माता-पिता अतिमुक्तक कुमार को अनेक प्रकार की युक्ति-प्रयुक्तियों से भी संयम के दृढ़भाव से नही हटा सके, तब उन्होंने इस प्रकार कहा--"हे पुत्र ! हम एक दिन के लिए भी तुम्हारी राज्यश्री देखना चाहते है ।" यह सुन कर अतिमुक्तक कुमार मौन रहे, तब माता-पिता ने उनका राज्याभिषेक--महाबल के समान--किया यावत् अतिमुक्तक कुमार ने भगवान् के पास दीक्षा अंगीकार की । फिर सामायिक आदि ग्यारह अगों का अध्ययन किया और बहुत वर्षो तक श्रमण-पर्याय का पालन किया तथा गुणरत्न-संवत्सर आदि तपस्याएँ की । अन्त मे संथारा कर के विपुलगिरि पर सिद्ध हुए।

॥ पन्द्रहवाँ अध्ययन समाप्त ॥

उक्खेवओ सोलमस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणारसिए णयरीए, काम-महावणे चेइए तत्थ णं वाणारसिए अलक्खे णामं राया होत्था। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ। परिसा णिग्गया। तए णं अलक्खे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ जहा कूणिए जाव पज्जुवासइ, धम्म-कहा।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे भगवन्! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी द्वारा प्ररूपित छठे वर्ग के पन्द्रहवें अध्ययन का भाव मैने आपके श्रीमुख से सुना। अव कृपा कर के सोलहवें अध्ययन के भाव कहे।" श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—"हे जम्बू! उस काल उस समय में वाणा-रसी नाम की नगरी थी। वहां काममहावन नामक उद्यान था। अलक्ष नाम का राजा राज करता था। उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वाणारसी नगरी के वाहर काममहावन उद्यान में पधारे। परिषद् वन्दन करने गई। महाराजा अलक्ष भी कोणिक राजा के समान भगवान् को वन्दन करने को गये। वन्दन-नमस्कार कर भगवान् की सेवा करने लगे। भगवान् ने धर्म-कथा कही।"

तए णं से अलक्खे राया समणस्स भगवओ महा-वीरस्स अंतिए जहा उदायणे तहा णिक्खंते, णवरं जेट्ठं

पुत्तं रज्जे अहिसिंचइ, एक्कारस अंगाइं, बहुवासा-परियाओ जाव विपुले सिद्धे। एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव छट्ठमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ॥ १ ॥

॥ छट्ठो वग्गो समत्तो ॥

अर्थ-धर्म उपदेश सुन कर राजा अलक्ष के हृदय में वैराग्य उत्पन्न हो गया। इसके बाद अलक्ष राजा ने भगवान् के पास, उदायन राजा के समान दीक्षा अंगीकार की। उदायन की प्रव्रज्या और इनकी प्रव्रज्या में यह अन्तर है कि उदायन राजा ने तो अपना राज्य अपने भानेज को दिया था और इन्होंने अपना राज्य अपने ज्येष्ठ-पुत्र को दे कर दीक्षा अगीकार की। उन्होंने ग्यारह अगों का अध्ययन किया तथा बहुत वर्षों तक चारित्र-पर्याय का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए ॥१॥

श्री सुधर्मा स्वामी, अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते हैं—"हे आयुष्मन् जम्बू ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगड सूत्र के छठे वर्ग के ये भाव कहे है। जैसा मैंने सुना, वैसा तुम्हें कहा है।

॥ छठा वर्ग समाप्त ॥

सातवाँ वर्ग

जइ णं भंते ! सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ जाव तेरस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा--

नंदा तह नंदवई, नंदोत्तर-नंदसेणिया चेव ।
मरुया सुमरुया महमरुया, मरुद्देवा य अट्ठमा ॥ १ ॥

भद्दा य सुभद्दा य, सुजाया सुमणाइया ।
भूयदिण्णा य बोधव्वा, सेणिय-भज्जाण णामाइं ॥२॥

अर्थ--श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अंतगडसूत्र के छठे वर्ग के जो भाव कहे, वे मैंने आपके श्रीमुख से सुने । अब कृपा कर सातवें वर्ग के भाव कहिये ।

सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें वर्ग में तेरह अध्ययन कहे है । वे इस प्रकार है--(१) नन्दा (२) नन्दवती (३) नन्दोत्तरा (४) नन्दश्रेणिका (५)मरुता (६)सुमरुता (७) महामरुता (८) मरुद्देवा (९) भद्रा (१०) सुभद्रा (११) सुजाता (१२) सुमनातिका और (१३) भूतदत्ता ।

ये तेरह नाम श्रेणिक राजा की रानियों के हैं । सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन इन्ही के नाम के है ।

जइ णं भंते ! तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स

णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया वण्णओ। तस्स णं सेणियस्स रण्णो नंदा णामे देवी होत्था, वण्णओ, सामी समोसढे। परिसा णिग्गया। तए णं सा नंदा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जाव हट्ठ-तुट्ठा कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता, जाणं दुरुहइ, जहा पउमावई जाव एकारस अंगाइं अहिज्जित्ता वीसं वासाइं परियाओ जाव सिद्धा एवं तेरस वि णंदागमेण णेयव्वाओ णिक्खेवओ ॥ २ ॥

॥ सत्तमो वग्गो समत्तो ॥

अर्थ--जम्बू स्वामी ने पूछा--हे भगवन् ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें वर्ग में तेरह अध्ययन कहे है, उनमें से प्रथम अध्ययन में क्या भाव कहे है ?

सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नाम का नगर था। उसके बाहर गुणशीलक उद्यान था। वहाँ श्रेणिक राजा राज करता था। उसकी रानी का नाम नन्दा था। किसी समय वहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे। परिषद् वन्दन के लिए निकली। भगवान् का आगमन सुन कर महारानी नन्दा अत्यन्त हृष्ट-तुष्ट एवं प्रसन्न

हुई। उसने सेवक पुरुषों को बुलाया और धर्म-रथ सजा कर लाने की आज्ञा दी। धर्म-रथ पर आरूढ़ हो कर नन्दा रानी भी पद्मावती रानी के समान भगवान् को वन्दन करने गई। भगवान् ने धर्म-कथा कही, जिसे सुन कर उसे वैराग्य भाव उत्पन्न हुआ। महाराजा श्रेणिक की आज्ञा ले कर उसने भगवान् से दीक्षा अगीकार की। ग्यारह अंगों का अध्ययन कर बीस वर्ष तक सयम का पालन किया और सिद्ध हो गई।

इसी प्रकार नन्दवती आदि बारह अध्ययनों का भाव जानना चाहिए।

हे जम्बू ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने सातवें वर्ग के भाव इस प्रकार कहे है ॥ २ ॥

॥ सातवाँ वर्ग समाप्त ॥
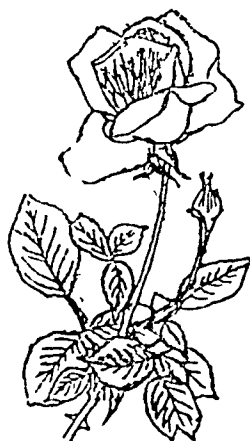
आठवाँ वर्ग

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं सत्तमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। अट्ठमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगड-दसाणं अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा—

काली सुकाली महाकाली, कण्हा सुकण्हा महाकण्हा।
वीरकण्हा य बोद्धव्वा, रामकण्हा तहेव य।
पिउसेणकण्हा णवमी, दसमी महासेणकण्हा य।

अर्थ—जम्बू स्वामी, श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—"हे भगवन् ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने अन्तकृतदसा नामक आठवें अंग के सातवें वर्ग में जो भाव कहें, वे मैंने आप से सुनें। आठवें वर्ग में भगवान् ने क्या भाव कहे है ?"

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं—"हे आयुष्मन् जम्बू ! श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी ने अंतकृतदसा सूत्र के आठवें वर्ग में दस अध्ययनों का कथन किया है। उनके नाम इस प्रकार है—

१ काली २ सुकाली ३ महाकाली ४ कृष्णा ५ सुकृष्णा

६ महाकृष्णा ७ वीरकृष्णा ८ रामकृष्णा ९ पितृसेनकृष्णा और १० महासेनकृष्णा।

जइ णं भंते ! अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता। पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

अर्थ--जम्बू स्वामी ने फिर पूछा--"हे भगवन् ! आठवें वर्ग के दस अध्ययनों मे से पहले अध्ययन में भगवान् ने क्या भाव कहे है ?"

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चम्पा णामं णयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए। कोणिए राया। तत्थ णं चम्पाए णयरीए सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया काली णामं देवी होत्था, वण्णओ। जहा णंदा जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमेहिं जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ २ ॥

अर्थ--सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय चम्पा नाम की नगरी थी। वहाँ पूर्णभद्र नाम का उद्यान था। कोणिक राजा राज करता था। श्रेणिक राजा की रानी एवं कोणिक राजा की लघुमाता 'काली' देवी थी। काली देवी ने नन्दा रानी के समान श्रमण-भगवान् महावीर स्वामी के समीप दीक्षा ले कर सामायिक आदि ग्यारह अंगों का

अध्ययन किया। वह उपवास, बेला, तेला आदि बहुत-सी तपस्या करती हुई विचरने लगी ॥ २ ॥

तए णं सा काली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया, उवागच्छित्ता एवं वयासी–"इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।" "अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।" तए णं सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलितवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

अर्थ–एक दिन वह काली आर्या, आर्य चन्दनवाला आर्या के पास आई और हाथ जोड़ कर विनयपूर्वक बोली–"हे पूज्या! आपकी आज्ञा हो, तो मैं रत्नावली तप करना चाहती हूँ।" तब चन्दनबाला आर्या ने उत्तर दिया–"हे देवानुप्रिये! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो, वैसा करो, किन्तु धर्मसाधना में प्रमाद मत करो।" आर्या चन्दनबाला की आज्ञा ले कर काली आर्या रत्नावली तप करने लगी ॥ ३ ॥

तं जहा––चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठ छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम-

गुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेड, करित्ता सव्व-कामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छव्वी-सइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेड, पारित्ता तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोत्तीसं छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्व-कामगुणियं पारेइ, पारित्ता ।

अर्थ——काली आर्या ने रत्नावली तप इस प्रकार किया—पहले उपवास किया और पारणा किया। पारणा में विगयों का सेवन वर्जित नही था। पारणा कर के बेला किया, फिर पारणा

कर के तेला किया, फिर आठ बेले किये। फिर उपवास किया। फिर बेला किया। फिर तेला किया। इस प्रकार अन्तर-रहित चोला किया, पाँच किये, छह किये, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह बारह, तेरह, चौदह, पन्द्रह और सोलह किये। चौतीस बेले किये।

चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठछट्ठाइं करेइ, करित्ता

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ।

अर्थ--पारणा कर के सोलह दिन की तपस्या की। पारणा कर के फिर पन्द्रह दिन की तपस्या की। इस प्रकार पारणा करती हुई क्रमशः चौदह, तेरह, बारह, ग्यारह, दस, नौ आठ, सात, छह, पाँच, चार, तीन, दो और एक उपवास किया। पारणा कर के फिर आठ बेले किये। पारणा कर के तेला किया। पारणा कर के फिर बेला किया। फिर पारणा कर के उपवास किया और फिर पारणा किया।

एवं खलु सा रयणावलीए तवोकम्मस्स पढमा परिवाडी, एगेणं संवच्छरेणं तिहिं मासेहिं बावीसाए य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव आराहिया भवइ ॥ ४ ॥

अर्थ--इस प्रकार काली आर्या ने रत्नावली तप की एक परिपाटी (लड़ी) की आराधना की। रत्नावली की यह एक परिपाटी एक वर्ष तीन महीना और बाईस दिन में पूर्ण होती है। इस एक परिपाटी में तीन सौ चौरासी दिन तपस्या के और अठासी दिन पारणा के होते है। इस प्रकार कुल चार सौ बहत्तर दिन होते है ॥ ४ ॥

तयाणंतरं च णं दोच्चाए परिवाडिए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता

विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता एवं जहा पढमाए परिवाडिए तहा बीयाए वि णवरं सव्वत्थपारणए विगइवज्जं पारेइ जाव आराहिया भवइ ।

अर्थ—इसके बाद काली आर्या ने रत्नावली तप की दूसरी परिपाटी प्रारम्भ की। उन्होंने पहले उपवास किया। उपवास का पारणा किया। पारणे में किसी भी प्रकार के विगय का सेवन नहीं किया अर्थात् दूध, दही, घी, तेल और मीठा–इन पाँच विगयों का लेना बन्द कर दिया। इस प्रकार उन्होंने उपवास का पारणा कर के बेला किया। पारणा किया। इस दूसरी परिपाटी के सभी पारणों में पाँचों विगय का त्याग कर दिया। इसी प्रकार तेला किया। पारणा कर के आठ बेले किये। पारणा कर के उपवास किया। फिर बेला किया। तेला किया, फिर चार, पाँच यावत् सोलह उपवास तक किये। फिर चौतीस बेले किये। पारणा कर के सोलह किये। फिर पन्द्रह, चौदह, तेरह, बारह, ग्यारह, दस, नौ, आठ, सात, छह, पांच, चार, तीन, दो और एक उपवास किया। फिर आठ बेले किये। फिर तेला, फिर बेला, फिर उपवास किया। जिस प्रकार पहली परिपाटी की, उसी प्रकार दूसरी परिपाटी भी की, परन्तु इसमे सभी पारणे विगय-वर्जित किये।

तयाणंतरं च णं तच्चाए परिवाडिए चउत्थं करेइ, करित्ता अलेवाडं पारेइ, सेसं तहेव। एवं चउत्था परिवाडी, णवरं सव्वत्थपारणए आयंबिलं पारेइ। सेसं तं चेव।

अर्थ—इसी प्रकार तीसरी परिपाटी भी की। तीसरी परिपाटी में पारणे के दिन विगय का लेप मात्र भी छोड़ दिया। इसी प्रकार चौथी परिपाटी भी की, परन्तु इसके पारणे में आयंम्बिल किया।

पढमम्मि सव्वकामपारणयं बीइयए विगइवज्जं।
तइयम्मि अलेवाडं, आयंबिलओ चउत्थम्मि ॥

अर्थ—प्रथम परिपाटी में पारणे में सर्वकामगुण युक्त, दूसरी में विगय त्याग, तीसरी में लेप का भी वजन किया और चौथी आयंबिल से की गई।

तए णं सा काली अज्जा रयणावलीतवोकम्मं पंचहिं संवच्छरेहिं दोहि य मासेहिं अट्ठावीसाए य दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ॥ ५ ॥

अर्थ—इस प्रकार काली आर्या ने रत्नावली तप की चारों परिपाटी पाँच वर्ष, दो मास और अट्ठाईस दिन में पूर्ण कर के चन्दनबाला आर्या के पास उपस्थित हुई और वन्दन-नमस्कार किया। फिर बहुत-से उपवास, बेला, तेला आदि तपस्याओं से अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ॥ ५ ॥

तए णं सा काली अज्जा तेणं ओरालेणं जाव धमणि-

संतया जाया या वि होत्था। से जहा णामए इंगाल-सगडी वा जाव सुहुयहुयासणे इव भासरासिपलिच्छण्णा तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणी उवसोभेमाणी चिट्ठइ ॥ ६ ॥

अर्थ—इस प्रकार महान् तपस्या से काली आर्यिका का शरीर प्रायः माँस और रक्त से रहित हो गया। उनके शरीर की धमनियाँ (नाड़ियाँ) प्रत्यक्ष दिखाई देने लगी। वह सूख कर अस्थिपञ्जर (हड्डियों का ढ़ाँचा) मात्र शेष रह गई। उठते, बैठते, चलते, फिरते, उनके शरीर की हड्डियों से 'कड़कड' शब्द होता था। जिस प्रकार सूखे काष्ठों से या सूखे पत्तों से अथवा कोयलों से भरी हुई चलती गाड़ी से ध्वनि होती है, उसी प्रकार उसके शरीर की हड्डियों से भी ध्वनि होने लग गई। यद्यपि श्री काली आर्या का शरीर मांस और रक्त के सूख जाने के कारण रूक्ष हो गया था, तथापि भस्म से आच्छादित अग्नि के समान तप-तेज की शोभा से अत्यन्त शोभित हो रहा था ॥ ६ ॥

तए णं तीसे कालीए अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्व-रत्तावरत्तकाले अयमज्झत्थिए जहा खंदयस्स चिंता जाव अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कार-परक्कमे सद्धा धिई संवेगे वा ताव मे सेयं कल्लं जाव जलंते अज्ज-चंदणं अज्जं आपुच्छित्ता अज्ज-चंदणाए अ॰

अब्भणुण्णाए समाणीए संलेहणा झूसणाझूसियाए भत्त-पाणपडियाइक्खियाए कालं अणवकंखमाणीए विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जेणेव अज्ज-चंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अज्ज-चंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--"इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं अब्भ-णुण्णाया समाणी संलेहणा जाव विहरित्तए।" "अहा-सुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंध करेह।"

तओ काली अज्जा अज्ज-चंदणाए अज्जाए अब्भ-णुण्णाया समाणी संलेहणा झूसणा झूसिया जाव विहरइ।

अर्थ--एक दिन पिछली रात्रि के समय काली आर्या के हृदय में स्कन्दक के समान इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ--"तपस्या के कारण मेरा शरीर अत्यन्त कृश हो गया है। इसलिए जब तक मुझ में उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम, श्रद्धा, धृति और सवेग आदि विद्यमान है, तब तक मुझे उचित है कि कल सूर्योदय होते ही आर्य चन्दनबाला आर्या को पूछ कर उनकी आज्ञा से संलेखना-झूषणा को सेवित करती हुई भक्तपान का प्रत्याख्यान कर के, मृत्यु को न चाहती हुई विचरण करूँ"--ऐसा विचार कर दूसरे दिन सूर्योदय होते ही वह आर्य चन्दनबाला आर्या के पास आई और वन्दन-

नमस्कार कर हाथ जोड़ कर बोली--"हे आर्ये ! मैं आपकी आज्ञा प्राप्त कर संलेखना-झूषणा करना चाहती हूँ ।" आर्य चन्दनबाला आर्या ने कहा--"हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो । धर्म-कार्य में विलम्ब मत करो।" आर्य चन्दनबाला से आज्ञा प्राप्त कर काली आर्या ने संलेखना की ।

सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहु-पडिपुण्णाइं अट्ठ संवच्छराइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव चरिमेहिं उस्सासणीसासेहिं सिद्धा ।। ७ ।।

अर्थ---काली आर्या ने आर्य चन्दनबाला आर्या से सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और पूरे आठ वर्ष तक चारित्र का पालन किया। अन्त में एक मास की सलेखना से आत्मा को सेवित कर, साठ भक्तों को अनशन से छेदन कर जिस अर्थ के लिये सयम ग्रहण किया था, उस अर्थ को अपने अन्तिम उच्छ्वासों में प्राप्त कर के वह सिद्ध-बुद्ध एवं मुक्त हो गई ।

।। प्रथम अध्ययन समाप्त ।।

उक्खेवओ बीयस्स अज्झयणस्स। एवं खलु जंबू !

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी। पुण्णभद्दे चेइए, कोणिए राया, तत्थ णं सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया सुकाली णामं देवी होत्था। जहा काली तहा सुकाली वि णिक्खंता जाव बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने श्री सुधर्मा स्वामी से पूछा—"हे भगवन् ! आठवें वर्ग के दूसरे अध्ययन का क्या भाव है ?"

सुधर्मा स्वामी ने कहा--"हे जम्बू ! उस काल उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी। वहाँ पूर्णभद्र नाम का चैत्य था। कोणिक राजा राज करते थे। श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता 'सुकाली' रानी थी। जिस प्रकार काली रानी प्रव्रजित हुई थी, उसी प्रकार सुकाली रानी भी प्रव्रजित हुई और बहुत-से उपवास, बेला, तेला आदि तपस्या करती हुई विचरने लगी।"

तए णं सा सुकाली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा जाव इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी कणगावली तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए। एवं जहा रयणावली तहा कणगावली वि, णवरं तिसु ठाणेसु अट्ठमाइं करेइ, जहा रयणावलीए छट्ठाइं। एक्काए परिवाडिए संवच्छरो पंच मासा बारस य अहोरत्ता। चउण्हं पंच वरिसा

णव मासा अट्ठारस दिवसा, सेसं तहेव । णव वासा परियाओ जाव सिद्धा ।। २ ।।

अर्थ--एक समय सुकाली आर्या, चन्दनबाला आर्या के समीप गई और वन्दन-नमस्कार कर हाथ जोड़ कर बोली--"हे महाभागे ! मै आपकी आज्ञा प्राप्त कर कनकावली तप करना चाहती हूँ।" उत्तर में उन्होने कहा--"जैसा तुम्हे सुख हो वैसा करो।" इसके बाद सुकाली आर्या ने काली आर्या से आराधित रत्नावली तप के समान 'कनकावली' तप किया। रत्नावली तप से कनकावली तप में यह विशेषता है कि रत्नावली तप में जहाँ तीन स्थानों पर आठ-आठ और चौतीस बेले किये जाते है, वहाँ कनकावली तप में उतने ही तेले किये जाते है। इस कनकावली तप की एक परिपाटी में एक वर्ष पाँच महीने और बारह दिन लगते है। इसमें अठासी दिन पारणे के और एक वर्ष दो महीने और चौदह दिन तपस्या के होते है। चारों परिपाटी को पूरा करने में पाँच वर्ष, नौ महीने और अठारह दिन लगते हैं।

शेष सारा वर्णन काली आर्या के समान हैं। नौ वर्ष चारित्र का पालन कर अन्त में मोक्ष प्राप्त किया ।। २ ।।

।। दूसरा अध्ययन समाप्त ।।

एवं महाकाली वि, णवरं खुड्डाग-सीह-णिक्कीलियं

तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तं जहा--चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्व-कामगुणियं पारेइ, पारित्ता बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता ।

अर्थ--जम्बू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी से पूछा--"हे

भगवन् ! आठवे वर्ग के तीसरे अध्ययन का क्या भाव है ?

सुधर्मा स्वामी ने कहा—"हे जम्बू ! तीसरे अध्ययन में महाकाली रानी का वर्णन है। वह श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी। उन्होंने भी सुकाली रानी के समान दीक्षा धारण की और 'लघुसिंह-निष्क्रीडित' नामक तप किया। वह इस प्रकार है---सर्व प्रथम उपवास किया। पारणा किया। इसकी भी पहली परिपाटी के सभी पारणों मे विगयों का सेवन वर्जित नही था, फिर वेला किया। पारणा कर के उपवास किया। फिर पारणा कर के तेला किया। इस प्रकार बेला, चोला, तेला, पचोला, चोला, छह, पाँच, सात, छह, आठ, सात, नौ और आठ किये।

वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ ।

अर्थ—फिर नौ, सात, आठ, छह, सात, पाँच, छह, चार, पांच, तीन, चार, दो, तीन, उपवास, दो और उपवास किया। इस प्रकार लघुसिंह-निष्क्रीड़ित तप की एक परिपाटी की।

तहेव चत्तारि पडिवाडीओ। एक्काए परिवाडीए छम्मासा सत्त य दिवसा। चउण्हं दो वरिसा अट्ठावीसा य दिवसा जाव सिद्धा ॥ ३ ॥

अर्थ—एक परिपाटी में छह महीने और सात दिन लगे। जिससे पारणे के तेतीस दिन और तपस्या के पाँच मास और तीन दिन हुए। इस प्रकार महाकाली आर्या ने चार परिपाटी की, जिसमें दो वर्ष और अट्ठाईस दिन लगे।

इस प्रकार महाकाली आर्या ने लघुसिंह-निष्क्रीड़ित तप की सूत्रोक्त विधि से आराधना की। तत्पश्चात् काली आर्या ने अनेक प्रकार की फुटकर तपस्याएँ की। अन्त में संथारा कर

के सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर के मोक्ष प्राप्त हुई ।

॥ तीसरा अध्ययन समाप्त ॥

एवं कण्हा वि, णवरं महासीह-णिक्कीलियं तवोकम्मं जहेव खुड्डागं, णवरं चोत्तीसइमं जाव णेयव्वं, तहेव ऊसारेयव्वं, एक्काए परिवाडीए एगं वरिसं छम्मासा अट्ठारस य दिवसा। चउण्हं छ वरिसा दो मासा बारस य अहोरत्ता, सेसं जहा कालीए जाव सिद्धा ॥ ४ ॥

अर्थ--इस प्रकार कृष्णादेवी का भी चरित्र जानना चाहिए। यह भी श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी। दीक्षा ले कर आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर के 'महासिंह-निष्क्रीड़ित' तपस्या की। जिस प्रकार लघुसिंह-निष्क्रीड़ित तप की विधि है, उसी प्रकार महासिंह-निष्क्रीड़ित तप की भी है। विशेषता यह है कि लघुसिंह-निष्क्रीड़ित तप में एक उपवास से लेकर नौ उपवास तक ऊपर चढ़ कर उसी क्रम से पीछे उतरा जाता है। किंतु महासिंह-निष्क्रीड़ित तप में एक उपवास से ले कर सोलह उपवास तक ऊपर चढ़ कर फिर उसी क्रम से नीचे उतरा जाता है। उसकी विधि इस प्रकार है--सर्वप्रथम उपवास किया, पारणा

कर के बेला किया । पारणा कर के उपवास किया । इस प्रकार तेला, बेला, चोला, तेला, पचोला, चोला, छह, पाँच, सात, छह, आठ, सात, नौ, आठ, दस, नौ, ग्यारह, दस, बारह, ग्यारह, तेरह, बारह, चौदह, तेरह, पन्द्रह, चौदह, सोलह, पन्द्रह, सोलह, चौदह, पन्द्रह, तेरह, चौदह, बारह, तेरह, ग्यारह, बारह, दस, ग्यारह, नौ, दस, आठ, नौ, सात, आठ, छह, सात, पाँच, छह, चोला, पचोला, तेला, चोला, बेला, तेला, उपवास बेला और उपवास । इस प्रकार एक परिपाटी की । जिसमे एक वर्ष, छह महीने और अठारह दिन लगे । इसमे इकसठ पारणे हुए । एक वर्ष चार महीने और सतरह दिन तपस्या हुई । चार परिपाटियों में छह वर्ष, दो महीने और बारह दिन लगे ।

इस प्रकार कृष्णा आर्या ने महासिंह-निष्क्रीड़ित तप की विधिपूर्वक आराधना की । अन्त में संथारा कर के काली आर्या के समान ये भी मोक्ष प्राप्त हुई ॥ ४ ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन समाप्त ॥

एवं सुकण्हा वि, णवरं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । पढमे सत्तए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ, एक्केक्कं पाणगस्स । दोच्चे सत्तए दो-दो भोयणस्स दो-दो पाणगस्स । तच्चे सत्तए तिण्णि भोयणस्स तिण्णि पाणगस्स । चउत्थे चउ, पंचमे पंच,

छट्ठे छ, सत्तमेसत्तए सत्तदत्तीओ भोयणस्स पडिग्गाहेइ, सत्त पाणगस्स ।

अर्थ--इसी प्रकार सुकृष्णा आर्या का भी चरित्र जानना चाहिए । यह भी श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी । इन्होंने भगवान् का धर्मोपदेश सुन कर दीक्षा अगीकार की और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर 'सप्तसप्तमिका' भिक्षु-प्रतिमा तप करने लगी । इसकी विधि यों है--प्रथम सप्ताह में गृहस्थ के घर से प्रतिदिन एक दत्ति अन्न और एक दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है । दूसरे सप्ताह में प्रतिदिन दो दत्ति अन्न की और दो दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है । तीसरे सप्ताह में प्रतिदिन तीन तीन दत्ति, चौथे सप्ताह में चार-चार, पाँचवें सप्ताह मे पाच-पाँच, छठे सप्ताह में छह-छह दत्ति और सातवें सप्ताह मे प्रतिदिन सात-सात दत्ति अन्न और पानी की ग्रहण की जाती है ।

एवं खलु सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं एगूणपण्णाए राइंदिएहिं एगेग य छण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया । अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--"इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उव-

संपज्जित्ताणं विहरित्तए।" "अहासुहं देवाणुप्पिए ! मा पडिबंधं करेह" ॥ १ ॥

अर्थ--उनपचास रात दिन में एक सौ छियानवे भिक्षा की दत्ति होती है। सुकृष्णा आर्या ने इसी प्रकार सूत्रोक्त विधि के अनुसार 'सप्तसप्तमिका' पडिमा की यथावत् आराधना की। आहार-पानी की सम्मिलित रूप से प्रथम सप्ताह में सात दत्तियाँ हुई, दूसरे सप्ताह मे चौदह, तीसरे में इक्कीस चोथे में अट्ठाईस, पाँचवें में पैंतीस, छठे में बयालीस और सातवें में उनपचास। इस प्रकार सभी मिला कर एक सौ छियानवे दत्तियाँ हुई।

इसके बाद सुकृष्णा आर्या, आर्य चन्दनबाला आर्या के समीप आई और वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार बोली--'हे पूज्ये ! आपकी आज्ञा प्राप्त कर मै अष्टअष्टमिका भिक्खुपडिमा तप करना चाहती हूँ।" आर्य चन्दनबाला आर्या ने कहा--"हे देवानुप्रिये ! जिस प्रकार तुम्हे सुख हो, वैसा करो, धर्म-कार्य में प्रमाद मत करो।"

तएणं सा सुकण्हा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, पढ़मे अट्ठए एक्केक्कं भोयणस्स दत्ति पडिगाहेइ, एक्केक्कं पाणगस्स दत्ति जाव अट्ठमे अट्ठए अट्ठट्ठ भोयणस्स दत्ति पडिगाहेइ अट्ठ पाणगस्स, एवं खलु अट्ठट्ठ-

मियं भिक्खुपडिमं चउसट्ठीए राइंदिएहिं दोहिं य अट्ठासीएहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता।

अर्थ--इसके बाद सुकृष्णा आर्या, "अष्टअष्टमिका भिक्षु-प्रतिमा" स्वीकार कर विचरने लगी। उन्होंने प्रथम अष्टक में एक दत्ति आहार की और एक दत्ति पानी की ली और दूसरे अष्टक में दो दत्ति आहार की और दो दत्ति पानी की ली। इसी प्रकार क्रम से आठवें अष्टक में आठ दत्ति आहार और आठ दत्ति पानी की ग्रहण की। इस प्रकार अष्टअष्टमिका भिक्षु-प्रतिमा तपस्या चौसठ दिन-रात में पूर्ण हुई। जिसमें आहार-पानी की दो सौ अठासी दात हुई। सुकृष्णा आर्या ने सुत्रोक्त विधि से इस अष्टअष्टमिका प्रतिमा की आराधना की।

णवणवमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। पढमे णवए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स, जाव णवमे णवए णवणव दत्ति भोयणस्स पडिगाहेइ णव पाणगस्स। एवं खलु णवणवमियं भिक्खुपडिमं एकासीइ राइंदिएहिं चउहिं पंचोत्तरेहिं, भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता।

अर्थ--इसके बाद आर्य चन्दनबाला की आज्ञा प्राप्त कर उसने "नवनवमिका भिक्षु-प्रतिमा" अंगीकार की। प्रथम नवक में एक दत्ति आहार और एक दत्ति पानी की ग्रहण की। इस क्रम से नौवें नवक में नौ दत्ति आहार और नौ दत्ति पानी की ग्रहण

की। यह नवनवमिका भिक्षु-प्रतिमा इक्यासी दिन-रात में पूरी हुई। इसमें आहार-पानी की चार सौ पाँच दत्ति हुई। इस नवनवमिका भिक्षु-प्रतिमा का सूत्रोक्त विधि अनुसार आराधन किया।

दसदसमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। पढमे दसए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स जाव दसमे दसए दस-दस भोयणस्स, दस-दस पाणगस्स। एवं खलु एयं दसदसमियं भिक्खुपडिमं एक्केणं राइंदियसएणं अद्धछट्ठेहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहेइ।

अर्थ—इसके बाद सुकृष्णा आर्या ने दशदशमिका भिक्षु-प्रतिमा अंगीकार की। इसके प्रथम दशक में एक दत्ति भोजन और एक दत्ति पानी की ग्रहण की। इसी प्रकार क्रमशः दसवें दशक में दस दत्ति भोजन और दस दत्ति पानी की ग्रहण की। यह दशदशमिका भिक्षु-प्रतिमा एक सौ दिन-रात में पूर्ण होती है। इसमें आहार-पानी की सम्मिलित रूप से पाँच सौ पचास दत्ति होती है। इस प्रकार इन भिक्षु प्रतिमाओ का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया।

आराहित्ता बहूहिं चउत्थ जाव मासद्धमासविविह-तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ। तएणं सा सुकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं जाव सिद्धा॥ ५॥

अर्थ--फिर सुकृष्णा आर्या उपवासादि से ले कर अर्द्ध-मासखमण और मासखमण आदि विविध प्रकार की तपस्या से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी। इस उदार एवं घोर तपस्या के कारण सुकृष्णा आर्या अत्यधिक दुर्बल हो गई। अन्त मे सथारा कर के सम्पूण कर्मो का क्षय कर सिद्धगति को प्राप्त हुई ॥ ५ ॥

॥ **पाँचवाँ अध्ययन समाप्त** ॥

एवं महाकण्हा वि णवरं खुड्डागं सव्वओभद्दं पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तं जहा--चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं

पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ।

अर्थ--इसी प्रकार राजा श्रेणिक की भार्या और राजा कोणिक की छोटी माता महाकृष्णा रानी ने भी भगवान् के पास दीक्षा अंगीकार की। महाकृष्णा आर्या, आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा ले कर 'लघु सर्वतोभद्र' तप करने लगी। उसकी विधि इस प्रकार है-सर्व प्रथम उन्होंने उपवास किया और पारणा किया (इसकी भी प्रथम परिपाटी के सभी पारणों

में विगयों का सेवन वर्जित नहीं है) पारणा कर के बेला किया। पारणा कर के तेला किया। इसी प्रकार चोला, पचोला किया, फिर तेला, चोला, पचोला, उपवास, बेला किया। फिर पचोला, उपवास, बेला, तेला, चोला। फिर बेला, तेला, चोला, पचोला, उपवास किया। फिर चोला, पचोला, उपवास, बेला, तेला किया। इस प्रकार महाकृष्णा आर्या ने 'लघुसर्वतोभद्र' तप की पहली परिपाटी पूरी की।

एवं खलु खुड्डागसव्वओभद्दस्स तवोकम्मस्स पढमं परिवाडिं तिहिं मासेहिं दसहिं दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता, दोच्चाए परिवाडिए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता जहा रयणावलीए तहा एत्थ वि चत्तारि परिवाडिओ, पारणा तहेव। चउण्हं कालो संवच्छरो मासो दस य दिवसा। सेसं तहेव जाव सिद्धा ॥ ६ ॥

अर्थ--इस एक परिपाटी में पूरे सौ दिन लगे, जिसमे पच्चीस दिन पारणे के और पचहत्तर दिन तपस्या के हुए। इसके वाद इस तप की दूसरी परिपाटी की। इसमें पारणे में विगय का त्याग कर दिया। तीसरी परिपाटी में पारणे के दिन विगय के लेपमात्र का भी त्याग कर दिया। इसके वाद चौथी परिपाटी की। इसमें पारणे के दिन आयम्बिल किया। इस प्रकार उन्होने लघुसर्वतोभद्र तप की चारों परिपाटी की। इनमें

एक वर्ष, एक मास और दस दिन लगे। इस प्रकार इस तप की सूत्रोक्त विधि के अनुसार आराधना की। अन्त में संथारा कर के सभी कर्मो का क्षय कर सिद्धगति को प्राप्त हुई ॥६॥

॥ छठा अध्ययन समाप्त ॥

एवं वीरकण्हा वि, णवरं महालयं सव्वओभद्दं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

तं जहा–चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। पढमा लया ॥ १ ॥

अर्थ—इसी प्रकार वीरकृष्णा रानी का चरित्र भी जानना चाहिए। यह श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी। इन्होंने भी दीक्षा अंगीकार की और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा ले कर 'महासर्वतोभद्र' तप करने लगी। इसकी विधि इस प्रकार है–सब से पहले उपवास किया, फिर पारणा किया। फिर बेला किया। इसी क्रम से तेला, चोला, पचोला, छह और सात किये। यह प्रथम लता हुई।

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। बीया लया ।। २ ।।

अर्थ--फिर चोला, पचोला, छह, सात, उपवास, बेला और तेला किया। यह दूसरी लता हुई ।। २ ।।

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। तइया लया ।। ३ ।।

अर्थ--फिर सात किये। फिर उपवास, बेला, तेला, चोला, पचोला और छह किये। यह तीसरी लता हुई ।। ३ ।।

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। चउत्थी लया ।। ४ ।।

अर्थ--फिर तेला, चोला, पचोला, छह, सात उपवास और बेला किया। यह चौथी लता हुई ।। ४ ।।

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। पंचमी लया ।। ५ ।।

अर्थ--फिर छह, सात, उपवास, बेला, तेला, चोला और पचोला किया। यह पाँचवी लता हुई ।। ५ ।।

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। छट्ठी लया ॥ ६ ॥

अर्थ--फिर बेला, तेला, चोला, पचोला, छह, सात और उपवास किया। यह छठी लता हुई ॥ ६ ॥

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। सत्तमी लया ॥ ७ ॥

अर्थ--फिर पचोला, छह, सात, उपवास, बेला, तेला और चोला किया। यह सातवी लता हुई ॥ ७ ॥

इस प्रकार सात लता की एक परिपाटी हुई।

एक्काए कालो अट्ठमासा पंच य दिवसा। चउण्हं दो वासा अट्ठ मासा वीस य दिवसा। सेसं तहेव जाव सिद्धा ॥ ७ ॥

अर्थ--इसमें आठ मास और पाच दिन लगे। जिनमें उनपचास दिन पारणे के और छह मास सोलह दिन तपस्या के हुए। इसकी प्रथम परिपाटी मे पारणों में विगय वर्जित नही किया। दूसरी परिपाटी में पारणे मे विगय का त्याग किया। तीसरी परिपाटी मे लेप मात्र का भी त्याग कर दिया और चौथी परिपाटी में पारणे में आयम्बिल किया। चारों परिपाटी को पूर्ण करने में दो वर्ष, आठ मास और बीस दिन लगे, उसने इस तप का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया यावत् सिद्ध-गति प्राप्ति की ॥ ७ ॥

॥ सातवाँ अध्ययन समाप्त ॥

एवं रामकण्हा वि, णवरं भद्दोत्तरपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

तं जहा---दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ । पढमा लया ॥ १ ॥

अर्थ--रामकृष्णा देवी का चरित्र भी इसी प्रकार है। यह भी श्रेणिक राजा की रानी और कोणिक की छोटी माता थी। दीक्षा ली और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर 'भद्रोत्तर-प्रतिमा' तप किया। उसकी विधि इस प्रकार है--सर्व प्रथम पचोला किया। पारणा किया। फिर क्रमशः छह, सात, आठ और नौ किये। प्रथम परिपाटी के सभी पारणो मे विगयों का सेवन वर्जित नही था। यह प्रथम लता हुई ॥ १ ॥

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ । बीया लया ॥ २ ॥

अर्थ--फिर सात, आठ, नौ, पाँच और छह किये। यह दूसरी लता हुई ॥ २ ॥

वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं

एक्काए कालो अट्ठमासा पंच य दिवसा । चउण्हं दो वासा अट्ठ मासा वीस य दिवसा । सेसं तहेव जाव सिद्धा ॥ ७ ॥

अर्थ--इसमे आठ मास और पांच दिन लगे । जिनमें उनपचास दिन पारणे के और छह मास सोलह दिन तपस्या के हुए । इसकी प्रथम परिपाटी में पारणों में विगय वर्जित नही किया । दूसरी परिपाटी में पारणे में विगय का त्याग किया । तीसरी परिपाटी मे लेप मात्र का भी त्याग कर दिया और चौथी परिपाटी मे पारणे में आयम्बिल किया । चारों परिपाटी को पूर्ण करने में दो वर्ष, आठ मास और बीस दिन लगे, उसने इस तप का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया यावत् सिद्ध-गति प्राप्ति की ॥ ७ ॥

॥ सातवाँ अध्ययन समाप्त ॥

एवं रामकण्हा वि, णवरं भद्दोत्तरपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तं जहा---दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। पढमा लया ॥ १ ॥

अर्थ--रामकृष्णा देवी का चरित्र भी इसी प्रकार है। यह भी श्रेणिक राजा की रानी और कोणिक की छोटी माता थी। दीक्षा ली और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा प्राप्त कर 'भद्रोत्तर-प्रतिमा' तप किया। उसकी विधि इस प्रकार है--सर्व प्रथम पचोला किया। पारणा किया। फिर क्रमशः छह, सात, आठ और नौ किये। प्रथम परिपाटी के सभी पारणो में विगयों का सेवन वर्जित नही था। यह प्रथम लता हुई ॥ १ ॥

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। बीया लया ॥ २ ॥

अर्थ--फिर सात, आठ, नौ, पाँच और छह किये। यह दूसरी लता हुई ॥ २ ॥

वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं

पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। तइया लया ॥ ३ ॥

अर्थ--फिर नौ, पाँच, छह, सात और आठ किये। यह तीसरी लता हुई ॥ ३ ॥

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। चउत्थी लया ॥ ४ ॥

अर्थ--फिर छह, सात, आठ, नौ और पाँच किये। यह चौथी लता हुई ॥ ४ ॥

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। पंचमी लया ॥ ५ ॥

अर्थ--फिर आठ, नौ, पाँच, छह और सात किये। यह पाँचवी लता हुई ॥ ५ ॥

एक्काए कालो छम्मासा वीस य दिवसा। चउण्हं दो वरिसा दो मासा वीस य दिवसा। सेसं तहेव जहा काली जाव सिद्धा ॥ ८ ॥

अर्थ--एक परिपाटी में छह मास और वीस दिन लगे। चारों परिपाटी में दो वर्ष दो मास और वीस दिन लगे।

रामकृष्णा आर्या भी काली आर्या के समान सभी कर्मों का क्षय कर के सिद्ध-पद को प्राप्त हुई ॥ ८ ॥

॥ आठवाँ अध्ययन समाप्त ॥

एवं पिउसेणकण्हा वि णवरं मुत्तावली तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

तं जहा--चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता [illegible] पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता [illegible] पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता [illegible] पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता [illegible] पारेइ, पारित्ता चउद्दसमं करेइ, करित्ता [illegible] पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, [illegible]

पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्व-कामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्व-कामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता एवं ओसारेइ जाव चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। एक्काए कालो एक्कारस मासा पण्णरस य दिवसा। चउण्हं तिण्णि वरिसा दस य मासा। सेसं तहेव। जाव सिद्धा।९।

अर्थ--इसी प्रकार पितृसेनकृष्णा का वर्णन जानना चाहिये। वह राजा श्रेणिक की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी। इन्होंने दीक्षा अंगीकार की और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा ले कर मुक्तावली तप किया। इसकी विधि इस प्रकार है—सर्व प्रथम उपवास किया। पारणा किया। इसकी भी पहली परिपाटी के सभी पारणों मे विगयों का सेवन वर्जित नहीं। फिर बेला किया। पारणा किया। फिर उपवास किया। पारणा किया। फिर तेला किया। इस प्रकार बीच में एक एक उपवास करती हुई पितृसेनकृष्णा आर्या पन्द्रह उपवास तक बढ़ी। फिर उपवास। बीच में सोलह। सोलह के बाद उपवास और फिर उपवास किया। फिर इसी प्रकार पश्चानुपूर्वी से मध्य मे एक एक उपवास करती हुई जिस प्रकार चढी थी, उसी प्रकार पन्द्रह उपवास से एक उपवास तक क्रम से उतरी। इस प्रकार मुक्तावली तप की एक परिपाटी समाप्त हुई। काली आर्या के समान इनकी चारों परिपाटियां पूर्ण की। एक परिपाटी मे ग्यारह महीने और

पन्द्रह दिन लगे और चारों परिपाटियों में तीन वर्ष और दस महीने लगे। अन्त में संलेखना-संथारा किया और समस्त कर्मों का क्षय कर के सिद्ध-पद को प्राप्त हुई।

॥ नौवां अध्ययन समाप्त ॥

एवं महासेणकण्हा वि णवरं आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

तं जहा—आयंबिलं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता बे आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता तिण्णि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता चत्तारि आयंबिलाइं करेइ करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता पंच आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता छ आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता एकोत्तरियाए वुड्ढीए आयंबिलाइं वड्ढंति चउत्थंतरियाइं जाव आयंबिलसयं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ ॥ १ ॥

अर्थ—इसी प्रकार महासेनकृष्णा का वर्णन भी जानना चाहिये। वह राजा श्रेणिक की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी। दीक्षा ली और आर्य चन्दनबाला आर्या की आज्ञा ले कर उसने 'आयम्बिल-वर्द्धमान' नामक तप किया। इसकी विधि इस प्रकार है—सर्व प्रथम आयम्बिल किया। दूसरे दिन उपवास किया, फिर दो आयम्बिल किये। फिर उपवास किया।

फिर तीन आयम्बिल किये। फिर उपवास किया। फिर चार आयम्बिल किये। फिर उपवास किया। फिर पाँच आयम्बिल किये। फिर उपवास किया। फिर छह आयम्बिल किये। फिर उपवास किया। इस प्रकार मध्य मे एक-एक उपवास करती हुई एक सौ आयम्बिल तक किये। फिर उपवास किया। इस प्रकार 'आयम्बिल वर्द्धमान' नामक तप पूरा किया ॥ १ ॥

तएणं सा महासेणकण्हा अज्जा आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं चोद्दसेहिं वासेहिं तिहि य मासेहिं वीसेहि य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव सम्मं काएणं फासेइ जाव आराहित्ता, जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता बहूहिं चउत्थेहिं जाव भावेमाणी विहरइ। तएणं सा महासेणकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं जाव उवसोभेमाणी उवसोभेमाणी चिट्ठइ ॥ २ ॥

अर्थ--इस प्रकार महासेनकृष्णा आर्या ने चौदह वर्ष, तीन मास और वीस दिन में 'आयम्बिल-वर्द्धमान' नामक तप का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया। इसमें आयम्बिल के पाच हजार पचास दिन होते है और उपवास के एक सौ दिन होते है। इस प्रकार सभी मिला कर पाच हजार एक सौ पचास दिन होते है। इस तप में चढना ही है, उतरना नही है।

इसके वाद वह महासेनकृष्णा आर्या, आर्य चन्दनबाला आर्या के पास आई और वन्दन-नमस्कार किया। इसके वाद

उपवास आदि बहुत-सी तपश्चर्या करती और आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी। उन कठिन तपस्याओं के कारण वह अत्यन्त दुर्बल हो गई, तथापि आन्तरिक तप-तेज के कारण वह अत्यन्त शोभित होने लगी ॥ २ ॥

तएणं तीसे महासेणकण्हाए अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकाले चिंता, जहा खंदयस्स जाव अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छइ जाव संलेहणा, कालं अणवकंखमाणी विहरइ। तएणं सा महासेणकण्हा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं सत्तरस वासाइं परियायं पालइत्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ जाव तमट्ठं आराहेइ चरिम उस्सासणीसासेहिं सिद्धा।

अर्थ—एक-दिन पिछली रात्रि के समय महासेनकृष्णा आर्या ने स्कन्दक के समान चिन्तन किया—"मेरा शरीर तपस्या से कृश हो गया है, तथापि अभी तक मुझ में उत्थान, बल, वीर्य आदि है। इसलिए कल सूर्योदय होते ही आर्य चन्दनबाला आर्या के पास जा कर, उनसे आज्ञा ले कर सथारा करूँ।" तदनुसार दूसरे दिन सूर्योदय होते ही आर्य चन्दनबाला आर्या के पास जा कर वन्दन-नमस्कार कर के सथारे के लिए आज्ञा माँगी। आज्ञा ले कर सथारा ग्रहण किया और मरण को न चाहती हुई धर्मध्यान-शुक्लध्यान मे तल्लीन रहने लगी।

महासेनकृष्णा आर्या ने चन्दनबाला आर्या से सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। सत्तरह वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया तथा एक मास की संलेखना से आत्मा को भावित करती हुई, साठ भक्तों को अनशन से छेदित कर, अन्तिम श्वासोच्छ्वास में अपने सम्पूर्ण कर्मों को नष्ट कर के मोक्ष प्राप्त हुई।

अट्ठ य वासा आई, एकोत्तरीयाए जाव सत्तरस।
एसो खलु परियाओ, सेणियभज्जाण णायव्वो ॥

इन दस आर्याओं में से प्रथम काली आर्या ने आठ वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया। दूसरी सुकाली आर्या ने नौ वर्ष तक चारित्र-पर्याय का पालन किया। इस प्रकार क्रमशः उत्तरोत्तर एक-एक रानी के चारित्र-पर्याय में एक वर्ष की वृद्धि होती गई। अन्तिम दसवीं रानी महासेनकृष्णा आर्या ने सत्तरह वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया। ये सभी राजा श्रेणिक की रानियाँ थी और कोणिक राजा की छोटी माताएँ थीं।

॥ दसवाँ अध्ययन समाप्त ॥

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, त्तिबेमि।

अर्थ—हे जम्बू ! अपने शासन की अपेक्षा से धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान् महावीर स्वामी जो मोक्ष

प्राप्त हैं, उन्होने आठवें अग अंतगडदसा सूत्र का यह भाव प्ररूपित किया है। भगवान् से जैसा मैंने सुना, उसी प्रकार तुम्हें कहा है।

अंतगडदसाणं अंगस्स एगो सुयक्खंधो अट्ठ वग्गा अट्ठसु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति तत्थ पढमबितिवग्गे दस-दस (अट्ठ ?) उद्देसगा, तइयवग्गे तेरस उद्देसगा, चउत्थपंचमवग्गे दस-दस उद्देसगा, छट्ठवग्गे सोलस उद्देसगा, सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा, अट्ठमवग्गे दस उद्देसगा। सेसं जहा णायाधम्मकहाणं।

। अंतगडदसंगसुत्तं समत्तं ।।

इस अन्तगडदसा सूत्र में एक श्रुतस्कन्ध है और आठ वर्ग है। इसको आठ दिनों में बांचा जाता है। इसके प्रथम और द्वितीय वर्ग मे दस-दस (दूसरे में आठ) उद्देशक (अध्ययन) हैं। तीसरे वर्ग मे तेरह, चतुर्थ और पाँचवें वर्ग में दस-दस अध्ययन है। छठे वर्ग में सोलह, सातवें वर्ग में तेरह और आठवें वर्ग में दस अध्ययन है।

।। अंतगडदसा सूत्र पूर्ण ।।

इस सूत्र में नगर आदि का वर्णन सक्षेप में किया गया है। नगर आदि से ले कर बोधिलाभ और अन्तक्रिया आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र के समान जानना चाहिए।